संजय की कलम से

आत्म-विश्वास

संसार के इतिहास को पढ़ने से पता लगता है कि किसी व्यक्ति, समाज अथवा देश की सफलता का एक मुख्य कारण आत्म-विश्वास रहा है। कहते हैं कि एक बार अकबर ने बीरबल से पूछा था कि लड़ाई में शत्रु के विरुद्ध काम आने वाला सबसे बड़ा शस्त्र कौन-सा है? तब बीरबल ने किसी स्थूल शस्त्र का नाम न लेकर आत्म-विश्वास को ही सबसे बड़ा शस्त्र बताया था। जो बात उसने युद्ध के प्रसंग में सफलता के लिये कही थी, वह वास्तव में संसार के हरेक क्षेत्र में चरितार्थ होती है।

किसी ने सच कहा है कि 'मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।' जिनके मन में आत्म-विश्वास का स्रोत कभी सूखता नहीं, वे अन्ततोगत्वा विजय माला से सुशोभित होते हैं। वे न केवल स्वयं सफलता और सिद्धि को प्राप्त होते हैं बल्कि अपने सम्पर्क में आने वाले जन-मन को भी उमंग, उत्साह तथा आत्म-विश्वास की प्रबल भावना से भर देते हैं। वे अपने क्रियात्मक जीवन से दूसरों को भी 'निश्चयात्मा विजयन्ति' का अनमोल पाठ पढ़ा देते हैं। वे प्रभु के आगे यह प्रार्थना करते हुए नहीं सुने जाते कि प्रभु उन्हें काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि से छुड़ाएँ बल्कि वे आत्म-विश्वास से तथा उस परमपिता परमात्मा की सहायता में निश्चय करके सफलता के मार्ग पर दृढ़तापूर्वक दिनों-दिन आगे बढ़ते चले जाते हैं।

रामायण की कथा में एक प्रसंग आता है जिसका भाव यह है कि राम के सेवक हनुमान यद्यपि असीम बल से युक्त थे तथापि वे कभी-कभी अपनी शक्तियों को भूल जाते थे और ऐसी स्थिति में किसी कठिन कार्य को करने में साहस की कमी अनुभव करते थे। परन्तु, कोई उनके बल की उन्हें पुन: स्मृति दिलाता था तो उनमें पुन: आत्म-विश्वास का आविर्भाव हो जाता था, तब वे स्वयं को असाधारण शक्ति से सम्पन्न अनुभव करते थे और कठिन-से-कठिन कार्य सम्पन्न कर लेते थे।

आत्म-विश्वास का यह अर्थ नहीं है कि स्थिति का पूरी तरह मूल्यांकन किये बिना तथा उसके परिणामों को सोचे बिना ही हम कर्म के लिए कूद पड़ें। जोश यदि अकेला हो तो मनुष्य को संकट में डाल देता है परन्तु यदि होश भी साथ हो तो बड़े कठिन कार्य भी सध जाते हैं। अत: हममें जितना ही प्रबल एवं अटूट आत्म-विश्वास हो उतनी ही हममें कर्म के परिणाम को शीघ्रता से जानने की शक्ति भी होनी चाहिए।

जितना ही मन में आत्म-विश्वास हो, यदि उतनी ही गम्भीरता भी हो तो हम लोगों के स्नेह-भाजन भी बन सकते हैं और दूसरों का आशीर्वाद पाते हुए निश्चय ही सफलता के प्रांगण में प्रवेश पा सकते हैं।

अमृत-सूची

- रक्षाबन्धन-एक..(संपादकीय) 4
- दादी जी की अविस्मरणीय 7
- कतल करे (कविता) 9
- प्रश्न हमारे, उत्तर दादी जी के ..10
- अपने संकल्प के रचयिता 12
- बाबा की कुटिया में घटित 13
- पत्र संपादक के नाम..... 14
- सच्चा दोस्त कौन? 15
- जाग! जाग! रक्षा कर(कविता)....18
- श्रद्धांजलि.....18
- बेहद की वैराग्य वृत्ति 19
- श्रद्धांजलि.....21
- महिला सशक्तिकरण 22
- इन्द्रियों की गुलामी.....24
- उसने मुझे ढूँढ़ लिया *(कविता)*... 25
- क्या गुस्सा सहज और 26
- सचित्र समाचार 29
- भगवान को क्या जवाब दोगे!.. 30
- सचित्र समाचार 32
- युग प्रबोधनी बातें एक.....34

सदस्यता शुल्क

	भारत	विदेश
वार्षिक	100 /-	1,000/-
आजीवन	2,000 /-	10,000/-

शुल्क '**ज्ञानामृत**' के नाम से ड्राफ्ट या ई-मनीऑर्डर द्वारा भेजने हेतु पता है- 'ज्ञानामृत', ज्ञानामृत भवन, **शान्तिवन-307510 (आबू रोड) राजस्थान, भारत।**

For Online Subscription

Bank Name : State Bank of India
A/c Holder Name : Gyanamrit
A/c No. : 30297656367
Branch Name : PBKIVV, Shantivan
IFSC Code : SBIN0010638

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क सूत्र :

Mobile : 09414006904, 09414423949
Email : hindigyanamrit@gmail.com
: omshantipress@bkivv.org

रक्षाबन्धन – एक मीठी प्रतिज्ञा

एक राजा अपने जलयान से यात्रा करते हुए जब एक छोटे-से द्वीप के पास से गुजरे तो उन्हें एक नारी की चीत्कार सुनाई दी। राजा अपने सेवकों के साथ उस ओर दौड़ पड़े जिधर से आवाज आ रही थी। उन्होंने देखा, कुछ दस्यु एक स्त्री को पीट रहे थे। स्त्री कह रही थी, दुष्टो, मैं भारतीय नारी हूँ, शील मेरा धर्म है, मैं तुम्हारी दुष्टता के आगे झुकूँगी नहीं, चाहे मेरे प्राण ही क्यों न ले लो।

राजा के ललकारने पर दस्यु भाग खड़े हुए। राजा ने उस स्त्री के समीप जाकर पूछा, भद्रे, आपका परिवार कहाँ है, मैं आपको वहाँ पहुँचा देता हूँ। स्त्री बोली, राजन, दस्युओं ने मेरे पति को मार दिया है, मेरे पुत्र मुझे छोड़कर पहले ही अलग हो चुके हैं, अब मैं किस परिवार के साथ रहूँगी? राजा ने कहा, इसका प्रबन्ध हम अपने राज्य में पहुँचकर कर देंगे। इसके बाद उस स्त्री को साथ लेकर राजा अपनी राजधानी की ओर चल पड़े।

राजधानी में राजा का भव्य स्वागत हुआ। उपस्थित जन समुदाय में मन्त्री, सामंत, सभासद, आम जनता आदि सब थे। राजा ने उस स्त्री से कहा, भद्रे, इन आगन्तुकों में से तुम जिसे अपने पति-पुत्र के रूप में चुनना चाहो, चुन सकती हो। तुम्हारे सुखी जीवन के लिए मैं सारी व्यवस्थाएँ जुटा सकता हूँ।

स्त्री की आँखें छलक उठीं। उसने कहा, 'राजन, मेरा पति था, जिसने मुझे अपनी वासना से जकड़ा, मुझे घर की चारदीवारी में बंद कर मेरा स्वास्थ्य लूटा। मुझे ऐसा भी नहीं रहने दिया कि मैं आततायियों का मुकाबला कर सकती। अशिक्षा, अज्ञान में जकड़ी रह गई मैं। पति की प्रवंचना ने मुझे दासी बनाकर छोड़ दिया। इसलिए अब मुझे पति नहीं चाहिए।'

'और पुत्र' उसने आगे कहा, 'पुत्रों को मैंने अपनी देह का सारा रस-रक्त पिला दिया, स्वयं कष्ट झेले, पर उनकी सेवा, शिक्षा और पालन-पोषण में कमी न आने दी। वही पुत्र जब बड़े हुए तो उनसे इतना भी नहीं बन पड़ा कि गाढ़े संकट में मेरी रक्षा करते। ऐसे कृतघ्न पुत्र लेकर भी अब मैं क्या करूँगी?'

'हाँ, जो मेरे शील, मेरे धर्म की रक्षा कर सके मुझे ऐसे साहसी और चरित्रवान भाई की आवश्यकता अवश्य है, यदि आप कर सकते हैं, तो मेरे लिए एक भाई की ही व्यवस्था कर दें।'

राजा ने उपस्थित जनसमूह पर आँखें दौड़ाकर देखा, सबकी आँखें झुकी हुई थीं। राजा ने कहा, 'बहन आओ, तुम मेरे साथ चलो, इनमें ऐसा कोई भाई दिखाई नहीं देता, जो तुम्हारा उद्धार कर सके।'

उस स्त्री और राजा की आँखें अब भी ढूँढ़ रही हैं, कुछ ऐसे भाई मिलें, जो अपने देश की नारी को अंधविश्वास, रूढ़ीवाद और अत्याचारियों के बंधन से छुड़ा सकें। पति और पुत्र बनने के लिए तो यहाँ सब तैयार हैं परन्तु भाई का भार संभालने के लिए आज एक भी व्यक्ति तैयार नहीं होता।

रक्षाबन्धन का त्योहार ऐसे ही भाइयों की खोज का

त्योहार है। कहने को तो 130 करोड़ की आबादी वाले इस देश में कण-कण में भाई भरे पड़े हैं पर भीड़ पड़ने पर जो भार हरें, ऐसे कितने हैं?

असुरक्षित केवल नारी ही नहीं है

पिछले आधे कल्प से भाइयों की कलाइयाँ सजती आई हैं और बहनों की गोद उपहारों से भरती आई है परन्तु असुरक्षा का मँडराता साया जस का तस है। ऐसा नहीं है कि केवल नारी ही असुरक्षित है। अकेली नारी असुरक्षित तब होती है जब उसका अस्तित्व नर से बिल्कुल अलग-थलग होता। समाज रूपी माला में नर और नारी रूपी मणके इस प्रकार गुँथे हैं कि इनको अलग-अलग किया ही नहीं जा सकता। किसी नारी पर जब कोई पुरुष अत्याचार करता है तो एक प्रकार से वह पुरुष को भी घायल करता है। वह पुरुष उस नारी का पिता, पुत्र, पति या भाई कोई भी हो सकता है। और जब कोई नारी किसी पुरुष पर अत्याचार करती है तो एक प्रकार से वह नारी को भी घायल करती है। वह नारी उस पुरुष की माता, बहन, पत्नी या पुत्री कोई भी हो सकती है।

भगवान ने किया था प्रतिज्ञाबद्ध

वर्तमान परिवेश में ऐसा लगता है कि हमें भाई-बहन की दीवार हटाकर, रक्षा सूत्र को आत्मा के स्तर पर ले जाना चाहिए जहाँ एक आत्मा दूसरी आत्मा को धागे से नहीं, एक मीठी प्रतिज्ञा से बाँधे और बँधे कि मैं तुम्हारे सम्मान की रक्षा करूँगा, तुम मेरे सम्मान की रक्षा करो। इस त्योहार का आदिकालीन रूप ऐसा ही था। जगत के बीजरूप परमात्मा शिव ने स्वयं धरती पर उतरकर आत्माओं को प्रतिज्ञाबद्ध किया था कि एक-दो को आत्मिक रूप में देखो, भाई-भाई की दृष्टि से देखो।

देह अभिमान की दीवार

परमात्मा पिता की यह शिक्षा आधाकल्प चली। सतयुग और त्रेतायुग में मानव ने मानव के साथ प्यार जताया और गाय तथा शेर ने भी एक घाट पर पानी पीया परन्तु आधाकल्प बीत जाने के बाद द्वापर युग के आगमन पर द्वैत भाव आ गया। नर और नारी में भी शारीरिक बनावट के आधार पर भेद की दीवार खड़ी हो गई जिसे दूसरे शब्दों में हम देह अभिमान की दीवार कह सकते हैं। कलियुग आते-आते भेद की दीवार इतनी मोटी हो गई है, जो इसे साल में एक बार मनाया जाने वाला रक्षाबन्धन का त्योहार तोड़ने में असमर्थ है।

द्वापर युग में हुआ इस प्रथा का आरम्भ

संगीतमय राखी, हीरों की राखी, सोने और चांदी की राखी, सिलमे-सितारों से जगमगाती राखी, नोटों की राखी – ये सब तो राखी के आधुनिक रूप हैं परन्तु प्राचीन काल में, द्वापरयुग में जब इस प्रथा का प्रारम्भ हुआ था तब तो कच्चे सूत के धागे को ही कलाई पर बाँधकर राजा को या आम नागरिक को श्रेष्ठ कर्मों के लिए प्रतिज्ञाबद्ध किया जाता था। भक्तिकाल के प्रारम्भ से मनाए जाने वाले इस त्योहार को साल में, दिन तो तब भी एक ही दिया जाता था परन्तु उस एक दिन में ली गई प्रतिज्ञा वर्ष भर चलती थी। कच्चे धागे की प्रतिज्ञा में इतनी ताकत थी। परन्तु आज चमकती-दमकती राखी की चकाचौंध में खोया मानव इसके पीछे छिपे रहस्य को विस्मृत करने में एक दिन की भी देरी नहीं लगाता। सच तो यह है कि राखी के सच्चे रहस्य से अवगत ही नहीं हो पाता है। तभी तो आज, नर जाति या नारी जाति किसी की भी मान-मर्यादा सुरक्षित नहीं है।

मुझे अपना भाई बना लो

इसमें दोष किसी का भी नहीं है। आत्माएँ सतयुग से कलियुग तक जन्म-पुनर्जन्म की यात्रा करते-करते शक्तिहीन हो गई हैं। जैसे एक कमजोर, दूसरे कमजोर को सहारा नहीं दे सकता, वैसी ही स्थिति सभी आत्माओं की हो चुकी है। अत: सहारेदाता प्रभु को धरती पर आना पड़ता है। वे आकर कहते हैं, इस अन्तिम जन्म में मुझे अपना भाई बना लो। मैं तो अशरीरी हूँ। मुझे स्थूल राखी से नहीं वरन् सच्चे, पवित्र भ्रातृभाव से बांध लो, मैं बंध जाऊँगा

और तुम्हारे संकल्प मात्र के आह्वान से स्वयं रक्षक बन जाऊँगा या किसी को रक्षा के निमित्त बना दूँगा। आप अपनी रक्षा का भार मुझ पर छोड़ दो और निश्चिंत हो जाओ।

यह सन्धि युग चल रहा है

भगवान शिव निराकार हैं, जन्म-मरण रहित हैं। परन्तु सृष्टि का भार हरने और अशक्तों को शक्ति देने का भार उठाने के लिए उन्हें परकाया प्रवेश की विधि द्वारा धरती पर अवतरित होना पड़ता है। उनके अवतरित होने का समय है पापाचार, दुराचार से भरा कलियुग के अन्त का समय, जो कि अब चल रहा है। परन्तु उनके अवतरित होते ही, इसी कलियुग के बीच एक नए युग का आगाज हो जाता है जिसे संगमयुग या सन्धियुग भी कहते हैं, जिसका अर्थ है जाते हुए कलियुग और आते हुए सतयुग के बीच का युग। वर्तमान समय वही युग चल रहा है।

शत्रु हैं काम, क्रोध, लोभ.....

इस छोटे-से युग में, धरती पर अवतरित भगवान, उन आत्माओं के सम्मुख, जो उन्हें पहचान लेती हैं, प्रतिपल नए-नए चरित्र प्रकट करते हैं। उनमें से ही उनका एक चरित्र है भाई के रूप का। वे संकल्पों, प्रकम्पनों और मधुर महावाक्यों के माध्यम से आत्मा को भाई के प्यार का, बल का, साथ का, सहयोग का, सुरक्षा का अनुभव करा देते हैं। वे असुरक्षित करने वाले शत्रुओं के प्रति भी आत्मा को सावधान कर देते हैं। ये शत्रु हैं काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार और इन शत्रुओं के सूक्ष्म अंश तथा इनके बाल-बच्चे जैसे कि ईर्ष्या, नफरत, चुगली, परचिन्तन, आलस्य आदि।

पाँच विकारों को इनकी वंशावली सहित जीतो

भगवान कहते हैं, कोई भी नर या नारी, किसी के भी शत्रु नहीं हैं। नर या नारी शरीर में मौजूद सभी आत्माएँ मेरे पुत्र हैं, आपस में भाई-भाई हैं, वे एक-दो के शत्रु कैसे हो सकते हैं? परन्तु ये दुश्मन विकार जब आत्मा में प्रवेश कर जाते हैं तो ये एक आत्मा को, दूसरी आत्मा से लड़वाकर उसका शत्रु बना देते हैं; भाई को भाई के विरोध में खड़ा कर देते हैं। अत: इन पाँचों विकारों को, इनकी वंशावली सहित आप जीतो। इस विषय में मैं तुम्हारा सदा मददगार हूँ। तुम विजय का संकल्प करते हुए एक कदम आगे बढ़ाओ, मैं हजार कदमों से तुम्हारी मदद करूँगा। वास्तव में कलाई पर बंधा धागा इन पाँचों विकारों को जीतने का ही प्रतीक है।

देह को न देख, आत्मा मणि को देखो

अत: रक्षाबन्धन का अर्थ है आत्मा की सर्वांगीण रक्षा (तन, मन, धन, जन, चरित्र, धर्म, मान, पद आदि) के लिए परमपिता परमात्मा शिव की ओर से बांधा गया बन्धन। यह मर्यादा का बन्धन है, सद्गुणों का बन्धन है, शुद्ध दृष्टि, वृत्ति, कृति का बन्धन है। इसीलिए मस्तक पर तिलक लगाया जाता है जो सन्देश देता है कि मिट्टी की देह को न देख, मस्तक पर जगमगाती मणि को देखो और हरेक आत्मा भाई से आत्मिक स्नेह रखो। मुख मीठा कराने के पीछे भाव है कि हरेक आत्मा भाई के प्रति सुकून देने वाले मीठे वचन बोलो। अन्दर की बुराइयाँ पिता परमात्मा को अर्पित कर देना ही इस त्योहार की सच्ची खर्ची है।

ईश्वरीय कर्त्तव्य के यादगार रूप में, साल में एक दिन मनाए जाने वाले रक्षाबन्धन की शिक्षाओं को हम प्रतिदिन स्मृति में रखें तो वो दिन दूर नहीं जब सुरक्षा का भार उठाने वाले भाइयों से यह सृष्टि सुसज्जित हो उठेगी। सच तो यह है कि ऐसा सृष्टि में फिर सुरक्षा का कोई भार रहेगा ही नहीं।

ब्र.कु. आत्म प्रकाश

हम जो पढ़ते, सुनते, देखते हैं, वह हमारे चित्त पर बैठ जाता है। जो चित्त पर बैठता है वह चिंतन का हिस्सा बन जाता है। चिंतन हमारे कर्म में आता है और कर्म से भाग्य बन जाता है। ध्यान से पढ़ें, सुनें, देखें, आपका भाग्य बन रहा है

पुण्यतिथि पर विशेष-

दादी जी की अविस्मरणीय यादें

ब्रह्माकुमार ओमप्रकाश, मढ़िया, सण्डिला, हरदोई (उ.प्र.)

राजयोगिनी दादी प्रकाशमणि जी का जीवन हम सभी के लिए आदर्श रूप रहा है। ब्रह्मा बाबा के अव्यक्त होने के बाद इस बेहद यज्ञ का नेतृत्व दादी जी ने जिस कुशलता के साथ किया, वह हम सभी के लिए अनुकरणीय है। दिव्य गुणों से सम्पन्न दादी जी का व्यक्तित्व असाधारण था। उन्हें देखकर कोई भी व्यक्ति नतमस्तक हुए बिना नहीं रह सकता था। मुझे भी दादी जी के साथ कुछ पल बिताने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

घर में सात्विकता का माहौल

मेरा जन्म उत्तर प्रदेश के हरदोई जिले के मढ़िया गाँव में साधारण और सात्विक ब्राह्मण परिवार में हुआ। लौकिक में हम 5 भाई और दो बहनें हैं। सबसे छोटे भाई को छोड़कर हम चारों भाई और दोनों बहनें ईश्वरीय ज्ञान में चल रहे हैं। भक्ति-भावना और पूजा-पाठ में मेरे सबसे बड़े भ्राता कन्हैया लाल जी सबसे आगे थे। मैं कोई पूजा-पाठ नहीं करता था परन्तु बड़े भाई को गीता व रामायण पढ़ते देखकर मन में इन ग्रंथों के प्रति उत्सुकता जरूर जाग्रत होती थी। चारों भाइयों में मेरा चौथा नम्बर है। मुझसे बड़े भ्राता प्यारे लाल जी महमूदाबाद (सीतापुर) सेवाकेन्द्र पर समर्पित हैं।

घर बैठे भगवान मिले

मुझे ईश्वरीय ज्ञान घर बैठे सन् 1988 में मिला। मैं और मेरे बड़े भ्राता अपने दरवाजे पर बैठे हुए थे, तभी एक श्वेत वस्त्रधारी व्यक्ति मेरे घर के बगल में रहने वालों से मिलने आया। कुछ देर रुकने के बाद जब वह व्यक्ति वापस जाने के लिए उठा, ठीक उसी समय मुझसे बड़े भ्राता प्यारे लाल जी पानी भरने के लिए खाली बाल्टी लेकर घर से निकल पड़े। उस समय पानी कुओं से भरकर घर ले जाया जाता था। बड़े भाई साहब उस श्वेत वस्त्रधारी भाई से बोले, भाई साहब, थोड़ा रुक जाइये। बाल्टी भरकर आ जाये तब चले जाना। कलियुगी रीति-रिवाज के अनुसार, कहीं जाने को तैयार व्यक्ति के सामने यदि कोई खाली बाल्टी लेकर आ जाये तो उसे अशुभ माना जाता है। वह श्वेत वस्त्रधारी भाई जी तपाक से बोले, मैं यह कुछ नहीं मानता हूँ क्योंकि मेरा भगवान से सीधा सम्बन्ध है। उनकी इस बात से भाई साहब और श्वेत वस्त्रधारी भाई में बहस छिड़ गई और यह बहस करीब एक घंटे चली। मेरे बड़े भाई जी गीता, रामायण के आधार पर बोलते थे और वह श्वेत वस्त्रधारी भाई ईश्वरीय ज्ञान के आधार पर। आखिर हम लोगों को हार माननी पड़ी और वह श्वेत वस्त्रधारी भाई गीता पाठशाला पर आने का निमंत्रण देकर चला गया।

दूसरे दिन हम लोग गीता पाठशाला पहुँचे और उस भाई ने गीता पाठशाला में लगे चित्रों पर समझाना शुरू किया। एक के बाद एक-एक करके वे चित्रों पर समझाते गये और हम लोगों ने पूरी प्रदर्शनी ध्यान देकर समझी और वापस घर आ गये। साप्ताहिक कोर्स करने के बाद ईश्वरीय ज्ञान पूरी तरह से बुद्धि में बैठ गया। अतीन्द्रिय सुख की अनुभूति होने के साथ-साथ हम लोग सम्पूर्ण निश्चय बुद्धि हो गये।

मधुबन पहुँचने का सौभाग्य

सन् 1990 के जनवरी मास में मुझे मधुबन पहुँचने का सुअवसर मिला। हमारी रहने की व्यवस्था पाण्डव भवन में हुई। शाम को 5 बजे दादी जी से मिलने के लिए हम मेडिटेशन हाल में पहुँचे। हमारे अतिरिक्त अन्य सेवाकेन्द्रों से आये हुए भाई-बहनें भी दादी जी से मिलने के लिए वहाँ बैठे थे। उस समय बाबा मिलन के दिन भाई-बहनों की संख्या ज्यादा से ज्यादा पाँच हजार तक ही पहुँच पाती थी। मुरली क्लास व बाबा मिलन का कार्यक्रम ओमशान्ति भवन

में होता था। दादी जी पार्टी में आने वाले प्रत्येक भाई-बहन से मिलती थी।

दादी जी से प्रथम मिलन

आखिर में हम लोगों की इन्तजार की घड़ियाँ समाप्त हुईं। दादी जी ने मेडिटेशन हॉल में प्रवेश किया। उन पर नजर पड़ते ही मैं तो अवाक् रह गया। ऐसा दिव्य व अलौकिक चेहरा मैंने जीवन में पहली बार देखा था। हॉल में प्रवेश होने के बाद दादी जी ने एक जगह पर खड़े होकर, बैठे हुए सभी बहनों व भाइयों पर नजर डाली और अपनी ओजस्वी वाणी में बोली, 'अतीन्द्रिय सुख पूछना हो तो गोपीवल्लभ के गोप-गोपियों से पूछो।' इसके बाद सामने लगे सोफे पर बैठ कर सभी उपस्थित भाई-बहनों से मिलने लगी। मेरी भी बारी आयी और मैं दादी जी के बिलकुल पास पहुँच गया। दादी जी की दृष्टि मिलते ही एहसास हुआ कि मैं जमीन पर नहीं बल्कि हवा में उड़ रहा हूँ। दादी जी से मिलन का यह मेरा पहला अनुभव था।

प्रत्येक को देती थी स्नेह भरी दृष्टि

इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय की मुख्य प्रशासिका होने के नाते दादी जी मधुबन आने-जाने वाली पार्टियों का पूरा ध्यान रखती थी। क्लास के समय दादी जी हॉल में उपस्थित सभी भाई-बहनों से 'रहने का स्थान ठीक-ठाक मिला?' अक्सर यह पूछा करती थी। दादी जी के ऐसा पूछने पर हाल में उपस्थित सभी भाई-बहनें हाथ हिलाकर दादी जी को जवाब देते थे जिससे दादी जी निश्चिन्त हो जाती थी। जाने वाली पार्टियों को जाने के एक दिन पहले सौगात देने का कार्यक्रम भी ओमशान्ति भवन में रखा जाता था और सौगात लेकर सामने से गुजरने वाले प्रत्येक भाई-बहन को दादी जी स्नेह भरी दृष्टि देकर विदा करती थी।

मधुबन में सेवा का सुनहरा अवसर

सन् 1991 में मुझे पाण्डव भवन में सेवा करने का सुनहरा अवसर प्राप्त हुआ। एक बार मैं पाण्डव भवन में कपड़ों के गट्ठर को अकेले ही उठाने की कोशिश कर रहा था। गट्ठर भारी था इसलिए बार-बार प्रयास करने पर भी वह मुझसे उठ नहीं रहा था। मुझसे कुछ ही दूरी पर खड़ी हुई दादी जी यह देख रही थी। उन्होंने तुरन्त एक भाई से कहा कि इस भाई को सहारा दो और यह कहते हुए स्वयं गट्ठर को हाथ लगाने के लिए आगे बढ़ी। तब तक वह भाई मेरे पास पहुँच चुका था। कितनी निरहंकारिता थी दादी जी में! इतने बड़े विश्व विद्यालय की प्रशासिका होने के बावजूद भी दादी जी में अहंकार नाममात्र भी नहीं था। आज की दुनिया में एक छोटे-से पद पर आसीन व्यक्ति भी रोब और अहंकार से बात करता है। दादी जी का ऐसा निरहंकारी जीवन देखने का मुझे परम सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

दादी जी की दृष्टि में आत्मिक भाव था

दादी जी सभी को आत्मिक भाव से देखती थी। उनकी दृष्टि में न कोई छोटा था, न कोई बड़ा। न कोई ऊँच और न कोई नीच। वह सभी को समान दृष्टि से देखती थी चाहे वह मधुबन निवासी हो या किसी सेवाकेन्द्र की इन्चार्ज। वह साधारण से साधारण ब्रह्माकुमार को भी बहुत ऊँची दृष्टि से देखती थी। मुझे याद है कि एक बार ओमशान्ति भवन से क्लास छूटने के बाद मैं पाण्डव भवन के प्रांगण में आकर एक कोने में खड़ा हो गया। मुझसे कुछ दूरी पर ही एक विकलांग भाई व्हील चेयर पर बैठा था। क्लास छूटने के बाद सभी भाई-बहनें पाण्डव भवन में प्रवेश कर रहे थे। बड़ा ही मनमोहक दृश्य था। कुछ ही क्षणों में दादी प्रकाशमणि जी ने भी पाण्डव भवन में प्रवेश किया। दादी जी

के हाथ में सुन्दर गुलाब का फूल था। पाण्डव भवन में प्रवेश करते ही दादी जी की दृष्टि व्हील चेयर पर बैठे उस भाई पर पड़ी। दादी जी आकर सीधे उनके पास रुक गई और स्नेह भरी दृष्टि देते हुए गुलाब का फूल उनको थमा दिया। फिर दृष्टि देकर, मुस्कराते हुए हाथ मिलाकर आगे बढ़ गई। यह कैसा दिव्य-अलौकिक नजारा था। कितना स्नेह व असीम प्यार था दादी जी में। आत्मिक स्नेह और रूहानियत से भरा दादी जी का चेहरा कितना आकर्षक था!

कुमारों की कुमारका दादी

एक बार कुमारों की भट्ठी में मुझे मधुबन जाने का चान्स मिला। कुमारों का विशेष क्लास दादी जी को कराना था। दादी जी ने हॉल में पहुँचते ही अपनी ओजस्वी वाणी में कहा कि कुमार सो ब्रह्माकुमार सो तपस्वी कुमार सो राजऋषि कुमार। ऐसा कहते हुए दादी जी ने हाथ हिलाते हुए सभी कुमारों का स्वागत किया।

दादी जी के दिल में कुमारों के प्रति असीम प्यार था। दादी जी जब कुमारों का क्लास लेती थी तो कहा करती थी, मेरा एक-एक कुमार भाई महावीर है। एक-एक कुमार भाई अपने चेहरे और चलन से बाबा का नाम रोशन करने वाला है। उस दिन क्लास में दादी जी ने सभी कुमारों को रूहानी जोश और उमंग-उत्साह से भर दिया। क्लास छूटने के बाद दादी जी ने हम सभी कुमारों को एक-एक चाँदी की अंगूठी दी जिस पर शिवबाबा का चित्र अंकित था।

अंगूठी लेते समय मुझे रामायण में वर्णित उस घटना की याद आ गई जब रावण सीता जी को हरण करके लंका ले गया था। हनुमान जी, सीता जी का पता लगाते-लगाते उनके पास पहुँचे और जब राम की दी हुई अंगूठी सीता जी को भेंट की तो सीता जी को भरोसा हो गया कि मेरे राम आ चुके हैं और लंका पर चढ़ाई करके, रावण को मारकर मुझे अपने साथ वापस जरूर ले जायेंगे। हम सभी जानते हैं कि वेदों, शास्त्रों, पुराणों व रामायण में वर्णित कथाएँ इस संगमयुग की ही यादगारें हैं। मानो दादी जी (महावीर) मुझ आत्मा रूपी सीता से कह रही हों कि घबराना नहीं। शिवबाबा (राम) आ चुके हैं। वे जल्द ही रावण को मारकर सभी (आत्मा रूपी सीताओं) को अपने साथ ले जायेंगे। तो ऐसी महान, कर्मठ, त्यागी, तपस्वी दादी जी को उनकी 12वीं पुण्यतिथि पर कोटि-कोटि अभिनन्दन व प्रणाम करता हूँ। ❖

कतल करे

ब्र.कु. निर्विकार नरायन श्रीवास्तव, मिश्रिख तीर्थ (उ.प्र.)

नहीं विकार में जाना तुमको, चाहे कोई कतल करे।
देहभान में लाकर माया, क्यों ना कैसी नकल करे।।

संगम पर यदि कतल हुआ, 21 जन्म तक रोओगे।
सुख-शान्ति सब छिन जायेंगे, अपना पद भी खाओगे।
दिव्य गुणों से सम्पूर्ण थे, अब रावण भी शकल धरे।
नहीं विकार में जाना तुमको, चाहे कोई कतल करे।

माया रूप भयंकर रचकर, सबको नाच नचाती है।
रुस्तम होकर युद्ध है करती, महारथी को गिराती है।
बुद्धि भ्रष्ट हो गई सभी की, काम न कोई अकल करे।
नहीं विकार में जाना तुमको, चाहे कोई कतल करे।।

परमपिता संगम पर आकर, राजयोग सिखलाते हैं।
सतयुग की राजाई खातिर, सबको विधि बताते हैं।
याद करे और चक्र चलाए, मुरली पर भी अमल करे।
नहीं विकार में जाना तुमको, चाहे कोई कतल करे।।

निश्चयबुद्धि बन करके अब तुम्हें पढ़ाई पढ़नी है।
घर-गृहस्थ में रह करके, अब कठिन तपस्या करनी है।
पवित्रता है कायम रखनी, माया जितना भी दखल करे।
नहीं विकार में जाना तुमको, चाहे कोई कतल करे।।

परमपिता ब्रह्मा के द्वारा, स्वर्गिक दुनिया रचा रहे।
मीठे बच्चे कह करके वो राजयोग हैं सिखा रहे।
श्रीमत पर जो चलेगा पक्का, वह राज सतयुगी अटल करे।
नहीं विकार में जाना तुमको, चाहे कोई कतल करे।
देहभान में लाकर माया, क्यों ना कैसी नकल करे।।

प्रश्न- संस्कार कैसे निर्मित होते हैं?

उत्तर- अभी दिल से, बुद्धि से, नयनों से जो करेंगे वो हमारे संस्कार बन जायेंगे। सतयुग में हमारे संस्कार कैसे होंगे वो इमर्ज करो। सतयुग में क्या करेंगे? जैसे गीत में सुना कि परमधाम में जाना है, फिर वैकुण्ठ में आना है। वहाँ तो सब बना बनाया मिलेगा, हमको कोई बनाना नहीं पड़ता है। बने बनाये पर हम आयेंगे, राजाई करेंगे खुशी से। राज्य करने की खुशी अभी से है, तो कितना नशा है! बाबा तो बहुत अच्छा है, कल्प के बाद फिर मिलेगा। बाबा सतयुग में कहाँ होगा, परमधाम में बैठा रहेगा। अभी साकार बाबा के द्वारा हमको पढ़ाया है। इस बाबा ने अपनी तो बहुत अच्छी कमाई की, हमको भी लायक बनाया।

हमने साकार बाबा की माइक में बोली हुई आवाज कभी नहीं सुनी है। इन कानों ने डायरेक्ट बाबा के महावाक्य सुने हैं, डायरेक्ट इन आँखों से देखा है। लेकिन अभी जैसा समय, वैसी बात। जब से बाबा के बने हैं, बाबा की आज्ञाओं को पालन करने के लिये मन ने अच्छा साथ दिया है। एक बाबा के अलावा मुझे तो कोई याद नहीं आता है। तन से यहाँ बैठे हैं या कहीं भी हैं, पर मेरा मन बाबा के साथ है। ऐसे नहीं, शान्तिवन से बाहर निकलें तो कुछ और करें, ना ना। मनजीते जगतजीत, ये बाबा के पुराने शब्द हैं।

प्रश्न- हेल्दी, वेल्दी, हैप्पी रहने का अर्थ क्या है?

उत्तर- बाबा ने मुझे कुंज भवन में नटखट बच्चों को सम्भालने की सेवा के निमित्त बनाया था। बाबा-मम्मा का अलग-अलग भवन था। बाबा रोज़ मुझे फोन द्वारा कुंज भवन के सब बच्चों का हालचाल पूछते रहते थे, कभी खुद भी सभी को मिल करके जाते थे। कभी किसी बच्चे का हाल सुन कर, देख कर बाबा उस बच्चे की बीमारी को दूर करने के लिये दवाई भी बताते थे। कई प्रकार से पेशेन्ट की सेवा करने से मेरा भाग्य बढ़ता गया। इसी बहाने बाबा से फोन पर रोज़ डायरेक्ट बात हो जाती थी। यह मेरा भाग्य था। कराची में एक बार भी बाहर के किसी डॉक्टर को नहीं बुलाया क्योंकि बाबा टच करते थे, सभी को क्या खिलाऊँ, क्या पहनाऊँ! बाबा ने ऐसी सेवा करनी सिखायी। बाबा इशारा करते थे, तुम्हारा काम है ध्यान रखना क्योंकि यह भी यज्ञसेवा है, बाबा के बच्चे हैं। फलस्वरूप बाबा के सभी बच्चे सदा हेल्दी, वेल्दी, हैप्पी रहे। हेल्दी माना माया की व्याधि से मुक्त। वेल्दी माना पैसे में धनवान नहीं बल्कि इस जीवन में अविनाशी ज्ञान धन ऐसा मिला है जो सदा साथ है। हैप्पी रहने से दिल खुश, दिमाग ठण्डा, स्वभाव सरल रहता है। यही सबके लिये दवा भी है तो दुआ भी है। इसी से सबके चेहरे चमकेंगे। धीरज, शान्ति, प्रेम – ये तीनों बातें हर एक के पास हों तो बहुत दुआयें मिलती हैं।

प्रश्न- हम किसी से भी मिलें तो उसको हमारे द्वारा क्या अनुभूति हो?

उत्तर- बाबा की सूरत ऐसे खींचती है जो व्यर्थ तो क्या पर साधारण संकल्प भी नहीं आता है। सतयुगी राजाई में भी इतना मजा नहीं होगा, जितना अभी राजयोग में आनंद

स्वरूप हो गये हैं। सत्-चित्त-आनन्द स्वरूप का क्या अर्थ है? सच्चाई है तो चित्त साफ है। आनंद में खुशी है, शक्ति है। राजयोग की राजाई वन्डरफुल है। अभिमान नहीं है पर मेरे जैसा कोई नहीं, थोड़ा नशा एक्स्ट्रा है... माफ करना। सब एक के हैं, एक हैं, यही स्मृति-वृत्ति-दृष्टि कितनी ऊँची है! अनासक्त और नष्टोमोहा वृत्ति धारण कराके बाबा ने सदा के लिये मुस्कराना सिखा दिया। राजयोग की गहराई में जाओ तो प्राप्ति बहुत है। यहाँ जो हमारी यूनिटी है, बहुत अच्छी है! यूनिटी से बहुत फायदा है। हर समय बाबा की अच्छी-अच्छी बातें याद आ जाती हैं। बाबा ने इतना बड़ा यज्ञ रचा और हम सबको बेफिक्र बादशाह बना दिया। किसी से भी मिलो तो वह यह अनुभव करे कि जैसे बाबा की दृष्टि महासुखकारी है, ऐसे हमारी भी दृष्टि सुखकारी है। भले भाषा न भी आती हो। यह हमारा अलौकिक जन्म है। अभी हम तीन बाप के बच्चे हैं। सतयुग में भी ऐसा जन्म नहीं होगा।

प्रश्न- दादी जी, एकमत होकर रहने का आधार क्या है?

उत्तर- मनमत न हो इसके लिए सदा श्रीमत पर चलते रहें तो हमेशा एकमत हो चल सकेंगे। सारे कल्प में अभी ही ऐसा मौका मिला है, जो सभी आपस में एकमत होकर रहते हैं और अपनी-अपनी कमाई जमा करते हैं। हमारी इस पढ़ाई में बहुत कमाई जमा हो रही है। सतयुग में आने की तैयारी भी यहाँ करनी है क्योंकि जब यह पढ़ाई पूरी हो जायेगी तो हम सभी आत्मायें वापस घर जायेंगी। फिर वापस सतयुग में आयेंगी। अव्यक्त होकर भी बाबा, आज दिन तक कैसे पालना दे रहा है और हम बच्चे उसी अव्यक्त पालना से अपनी स्थिति को अच्छे से अच्छा बना रहे हैं। बहुत इज़ी राजयोग है लेकिन ऐसे भी नहीं कि सहज कहके अलबेले हो जाएं। नहीं। अलबेलेपन का अंश न हो, नहीं तो कमाई से वंचित रहेंगे। इसके लिए साक्षी होके देखो। जैसे अभी हम एक-दो को स्नेह की दृष्टि से देखते, मिलन मना रहे हैं ऐसे सतयुग में थोड़े ही होगा! यहाँ बैठे बुद्धि बाबा के साथ है। जहाँ बाबा, वहाँ बच्चे।

प्रश्न- आपके दिल में क्या है, भावना में क्या है?

उत्तर- अभी दिल की बात यह है कि कभी भी व्यर्थ ख्यालात नहीं आते हैं, मेरे को तो नहीं आते, पर किसको भी न आयें, यह भावना है क्योंकि सारे ही मेरे बहन-भाई हैं। कोई-कोई बहुत अच्छे-अच्छे भाई-बहनें आते हैं। जब हम उन्हें मिलते हैं तो बहुत खुशी होती है। संगमयुग में जो हमारा आपस में सम्बन्ध है ना, बड़ा सच्चा और सुखदाई है। दिल से पूछकर देखो, दिल पर हाथ लगाकर देखो, पाँच हजार साल में यह जो समय है, बड़ा सुखकारी है। यज्ञसेवा से कइयों का बहुत प्यार है क्योंकि भगवान ने यज्ञ रचा है, जहाँ हम समर्पण हुए हैं। कई आत्माओं ने यज्ञसेवा से अपनी बहुत अच्छी स्थिति बनाई है। कोई-कोई पुराने मिलते हैं तो उन्हें देख मुझे याद आता है कि इन्होंने दिल से सेवा की है। बाबा ने ही सबसे पहले दिलखुश मिठाई खिलाने का सिस्टम बनाया था। दिलखुश मिठाई खिलाओ, जो चेहरा खिल जाए। इस तरह की टोली खिलाने से भी बहुत खुशी होती है। सिर्फ हाथ से टोली नहीं देते पर स्नेह और सच्चाई की दृष्टि भी देते हैं। खाओ टोली, सुनो बोली, बनो होली। इस प्रकार से संगम का हमारा यह मिलन बहुत ही मूल्यवान है।

प्रश्न- वायुमण्डल स्नेह से भरपूर हो, इसके लिए क्या करें?

उत्तर- स्व की भावना – सबके लिये चाहे अपने लिये, न्यारी और प्यारी हो। सारे दिन में सबके गुण देखने से वायुमण्डल स्नेह से भरपूर हो जाता है। प्रेम तो बाबा के लिये और सारे ईश्वरीय परिवार के लिये है ही। मैं तो कहेंगी, बाबा समान बनना हो तो रूहानी स्नेह की गहराई में जा करके शान्ति से काम लो। सेवा कितनी चल रही है, सेवा वृद्धि को पा रही है परन्तु हरेक अपने आपको चेक करें और ईर्ष्या, द्वेष, यह ऐसी है, यह वैसी है... यह सब खत्म करें। शुभचिंतन में रहना, सबके लिये शुभचिंतक बनना, यह बहुत सुखदाई है। मुझे कुछ चाहिए नहीं। ❖

अपने संकल्प के रचयिता हम स्वयं हैं

ब्रह्माकुमारी शिवानी बहन, गुरुग्राम (हरियाणा)

जब हम खुशी की बात करते हैं तो ऐसा लगता है कि खुशी शायद होंठों तक ही सीमित है। जब मैं बच्चों के साथ होती हूँ तब खिलखिलाहट होती है, खुशी वहीं तक सीमित है लेकिन वो केवल खिलखिलाहट है, खुशी नहीं है। खुशी अंदर की चीज है। अंदर की वो अनुभूति है जिसे मैं खुद निर्मित करती हूँ। उसे रचने के लिए मुझे अपने संकल्पों पर ध्यान देना पड़ता है।

परिस्थितियाँ आती हैं, लोग अच्छा-बुरा व्यवहार करते हैं, तो कहीं न कहीं हमारा जीवन, हमारे नियंत्रण से बाहर चला जाता है। तब ये सोच चलनी शुरू होती है कि आखिर इस तरह से जीवन कब तक चलेगा! फिर हम खुशी के विपरीत वाली अनुभूति, चाहे वो चिंता की है, भय की है, उसे स्वीकार करना शुरू कर देते हैं क्योंकि परिस्थिति पर सोच निर्भर करती है और परिस्थिति सदा हमारा साथ देने वाली नहीं है। रिश्तों में हमेशा हर चीज मेरे अनुसार चले, ये होने वाला नहीं है। लोग मेरी आशाओं को हमेशा पूरा करते रहें, ये होने वाला नहीं है। जैसा मैं सोचूँ, आप वैसा व्यवहार करें, ये होने वाला नहीं है। हमारी खुशी आपके व्यवहार पर निर्भर है, यह हमारे लिए बहुत बड़ा प्रश्नचिह्न है। तब हमने महसूस किया कि परिस्थिति तो बाहर से आती है, संकल्प हम पैदा करते हैं। अगर हम अपने आपको देखना शुरू करें और स्वयं को बदलना शुरू करें तो हो सकता है कि उसी परिस्थिति में हम अपने आपको थोड़ा-सा अच्छा अनुभव कर सकते हैं।

सोच से संवेदना, संवेदना से कार्य, कार्य से आदत बनती है। अब यहाँ पर प्रश्न उठता है कि गुस्सा हमारी आदत क्यों बन रही है? क्योंकि हमने कहीं भी रुक कर अपने संकल्प को जाँचा नहीं और उसे बदला नहीं। आप अपनी डायरी में यह लिखकर रख दें कि 10 मिनट सुबह का समय और 10 मिनट शाम का समय हम अपने साथ व्यतीत करेंगे। इससे आपका बहुत सारा कार्य हल्का हो जायेगा। नहीं तो आप साधारण तरीके से ही चलते रहेंगे। यदि हम आज की दिनचर्या को अपने मन में दुहराते भी हैं तो उसमें भी हम परिस्थिति और दूसरे लोगों को ही ज्यादा देखते हैं, जो कि मेरे वश में नहीं हैं। मुझे सिर्फ यह देखना है कि उस परिस्थिति में मैं किस प्रकार से व्यवहार कर सकती थी, मैं क्यों दुखी हुई? यहाँ पर मैंने गुस्सा कर दिया, मैं गुस्सा नहीं भी करती तो भी काम चल सकता था। कार्यान्वयन करने के लिए हमें यह ध्यान रखना पड़ता है कि हमें परिस्थिति के बारे में चिंतन नहीं करना है कि औरों ने क्या बोला या क्या किया, मैंने क्या ग्रहण किया और मैं क्या ग्रहण कर सकती थी, हमें ये देखना है।

यदि हम ऐसा नहीं करते हैं तो हम दुख की अनुभूति करते-करते सो जायेंगे और जब हम अगली सुबह उठेंगे तो फिर वही दर्द उत्पन्न होने लगेगा। फिर जब हम उसी व्यक्ति से दुबारा मिलेंगे तो वही दर्द उस व्यक्ति के प्रति पुनः उत्पन्न हो जायेगा। दर्द से मुक्ति के लिए अपने आपसे इस प्रकार बातें करें –

परिस्थितियों से और लोगों से अपने आपको हटाते हुए, अपने मन को देखते हैं... सारे दिन में मेरी क्या सोच चलती है...प्रत्येक संकल्प को मैं निर्मित कर रही हूँ...और अब मैं समझ गई...कि ये मेरी रचना है...आज दिन तक...जो दर्द...जो धोखा...जो तकलीफ मैंने पकड़कर रखी थी...वो मैंने ही पकड़कर रखी थी...दर्द में रहना मैंने ही खुद चुना था...आज...मैं अपने आपको...उस दर्द

से...मुक्त करती हूँ...शुद्ध संकल्प रचकर...मैं शांत स्वरूप आत्मा हूँ...और कोई नहीं...कोई भी शक्ति मुझे हताश नहीं कर सकती...शांत रहना...यह मेरा स्वभाव है...शान्ति मेरी शक्ति है...यह मेरी रचना है... ❖

बाबा की कुटिया में घटित चमत्कार

ब्रह्माकुमार सत्यभान सारस्वत, वरिष्ठ वैज्ञानिक, देहरादून

सत्यकथा है, लगभग चार वर्ष पुरानी, जब मैं विज्ञान गोष्ठी में भाग लेने मधुबन गया था। इस अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी का आयोजन ब्रह्माकुमारीज की आध्यात्मिक विज्ञान शाखा (स्पार्क) द्वारा ज्ञानसरोवर में किया गया था। मेरे ठहरने की व्यवस्था पाण्डव भवन के 'अतिथि कक्ष' में थी।

सितम्बर का बरसात का महीना था। अगले प्रात:काल जब हमें ज्ञानसरोवर जाना था तो तेज वर्षा के कारण रपट पर मेरा पैर फिसल गया और मोच आ जाने के कारण मैं दर्द से कराहता हुआ सड़क पर गिर गया। मुझे पिछले दस-बारह वर्षों से घुटने का दर्द हो रहा था। मेरे साथी भाई ने मुझे सहारा देकर उठाया किन्तु दर्द इतना पीड़ादायक था कि चलना सम्भव नहीं हो पा रहा था।

आगे जो बताने जा रहा हूँ उससे पहले अपना परिचय देना चाहूँगा कि मैं व्यवसाय से वैज्ञानिक हूँ। लगभग 33 वर्ष भारत सरकार के विभिन्न वैज्ञानिक प्रतिष्ठानों में, विभिन्न राज्यों में सेवा की है। इस पृष्ठभूमि के कारण मेरा नीम, हकीम और देवी-देवताओं की पूजा से इलाज में विश्वास कभी नहीं रहा और न रहेगा। किन्तु अग्रघटित सत्यकथा ने मेरे विचारों में भावनात्मक परिवर्तन कर दिया और अध्यात्म में विश्वास बढ़ा दिया।

उस समय, जब मैं असहनीय दर्द से पीड़ित था तब अपने सहयोगी से निराश भाव से कह रहा था कि अब दर्द सहा नहीं जा रहा है। मैं अपने बेटे को फोन करके बुलाता हूँ, वही मुझे यहाँ से किसी बड़े हॉस्पिटल में ले जाए, शायद पैर में फ्रैक्चर हो गया है। सहयोगी भाई ने कहा कि बेटे को फोन करने से पहले एक प्रयास करते हैं। चलो, बाबा की कुटिया में चलते हैं। चिन्ता की बात नहीं है। यहाँ ब्रह्माकुमारीज़ का अपना बड़ा चिकित्सालय है। वहाँ सभी सुविधाएँ हैं। विशेषज्ञ डॉक्टर्स भी हैं।

साहस जुटाकर, अपने सहयोगी का सहारा लेकर मैं बाबा की कुटिया में पहुँचा जिसे मैंने पहले कभी नहीं देखा था। बाबा की कुटिया, प्रकृति की गोद में बनी बड़ी सुन्दर झोपड़ी (कोटेज) जैसी है। वहाँ योगियों के बैठने के लिए प्रबंध भी है। यथास्थान हम बाबा का ध्यान करने लगे। धीरे-धीरे पैर उठने लगा अर्थात् फ्रैक्चर का संदेह समाप्त हो गया और जब मैंने दोनों पैरों की कसरत की तो देखा कि सामान्य जैसे हो रहे हैं। पीड़ा कम हो गई। पुन: साहस कर मैंने बाबा की कुटिया की परिक्रमा धन्यवाद भाव से की। पीड़ा जा चुकी थी। यह बाबा की कृपा का जीवंत चमत्कार था। ये सत्य वचन लिखते समय आज भी मुझे आश्चर्य हो रहा है किन्तु परमानन्द की अनुभूति भी हो रही है।

मैं बाबा की अनुकम्पा से अति आनंदित हो रहा था। ज्ञानसरोवर पहुँच कर मैंने अपने देर से पहुँचने की पूरी कहानी, गोष्ठी की संयोजिका बहन अम्बिका को सुनाई जिससे मेरा पूर्व परिचय, मेरे कर्नाटक के सेवाकाल की पृष्ठभूमि से था। वे बोली, आपके ठहरने की व्यवस्था यहीं ज्ञान सरोवर में कर देती हूँ। मैंने उनको धन्यवाद देते हुए कहा, यह तो मेरा सौभाग्य रहेगा कि मैं शेष समय बाबा के निकट बिताऊँ और बाबा का सदैव स्मरण करता रहूँ। ❖

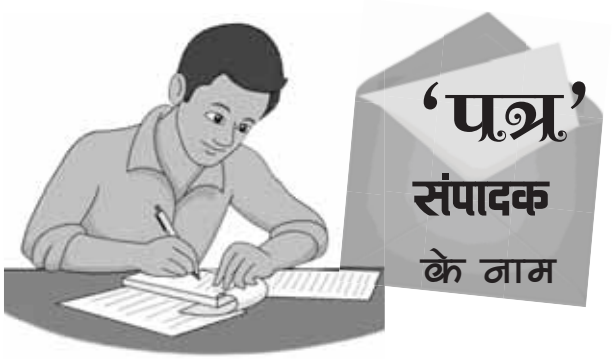

मई, 2018 में प्रकाशित लेख 'जिन्दगी को ढूँढ़ने मत जाओ, निर्माण करो' बहुत ही सारगर्भित, हृदयस्पर्शी और प्रभावशाली है। स्थूल भवन का निर्माण पत्थर, ईंट, रेत आदि से होता है और जीवन का निर्माण ईश्वरीय ज्ञान, गुण और शक्तियों द्वारा होता है। यह सारस्वत लेखनी अनेक पाठकों के लिए निश्चित रूप से, जीवन पथ को सुगम बनाने में सहायक होगी। नयी शैली के लेख प्रकाशन हेतु सम्पादक तथा लेखक को हृदय से धन्यवाद।

ब्र.कु.सुदाम, राउरकेला, उड़ीसा

अप्रैल, 2018 अंक में प्रकाशित 'जीवन के आदि-मध्य-अन्त का सार छुपा है ओमशान्ति में' लेख अत्यन्त हृदयस्पर्शी लगा। एक वरिष्ठ पत्रकार का अनुभवजन्य लेख होने के कारण मुझ पर और भी अधिक प्रभाव पड़ा। मैं तीन बार मधुबन जा चुका हूँ। वहाँ के कार्यकर्त्ताओं के मृदुल व्यवहार, विनम्रता भरे वार्तालाप तथा अपनत्व भरे संस्कारों में सबको मोह लेने की शक्ति है। मधुबन घर सचमुच वैकुंठ ही है।

ब्रह्माकुमार अमृतेश्वर तन्डर, अण्णिगेरी (कर्नाटक)

पिछले तीस वर्षों से ज्ञानामृत पत्रिका का निरन्तर पाठी हूँ। हर पत्रिका कोई न कोई प्रेरणा देकर अथवा मन-मस्तिष्क पर छाप छोड़कर जाती है। सचमुच ज्ञानामृत पत्रिका ज्ञान रत्नों और हीरों का भण्डार तथा ईश्वरीय अनुभवों का अथाह समुद्र है जिसमें आत्मा निरन्तर डूबी रहकर ईश्वर के अति समीप पहुँचने का दिव्य अनुभव करती है। मई, 2018 की पत्रिका का हर आलेख और अनुभव बहुत ही प्रेरणादायी है। ''संजय की कलम से'' इसे तो पत्रिका हाथ में आते ही पढ़ने का मन करता है। सम्पादकीय ''कर्म छिपाया न छिपे'' ओहो, इसने तो आत्मा को झकझोर कर रख दिया है कि हमें एक-एक कर्म को किस तरह सोच-समझ कर करना चाहिए। ''महिला सशक्तिकरण'' लेख महिलाओं को सशक्त बनाने हेतु बहुत ही सराहनीय है। ''बाबा का आभार'' अनुभव पढ़कर सचमुच आश्चर्य लगा कि जेल में रहकर भी कोई ब्रह्माकुमार बन सकता है! संयुक्त सम्पादिका बहन द्वारा श्रम दिवस पर लिखित ''तोड़ो, व्यसनों की कारा तोड़ो'' आलेख बहुत ही अधिक प्रेरणादायी है। जगदीश भाई साहब की पुण्यतिथि पर लिखित शिक्षाओं ने तो बी.के.जीवन में बहुत कुछ करने के लिए प्रेरित किया है। इस तरह सम्पूर्ण पत्रिका में छपे सभी अनुभव एवं आलेख बहुत ही सराहनीय एवं प्रेरणास्पद हैं। मैं सम्पादकीय परिवार एवं लेखकों को साधुवाद देते हुए सादर नमन करता हूँ।

ब्र.कु.हरिदत्त शर्मा, मुख्य सम्पादक
''स्कूल प्रांगण'' पाक्षिक, आगरा

मई, 2018 के अंक को पढ़ते-पढ़ते कहीं पर रुक कर यदि चिन्तन-मनन करने की आवश्यकता पड़ती है तो वह स्थल है गहन अनुभव से भरा लेख ''जिन्दगी को ढूँढ़ने मत जाओ, निर्माण करो।'' अध्यात्मिक जीवन का निर्माण मुख्य सात बातों पर आधारित होने की चर्चा जिस सहजता से रहस्यों से पर्दे हटाती है, वह भारी मन को हल्का करने की परमौषधि महसूस हुई। यह लेख नई व सरल विधि से शक्तिदायक अमृत परोसता है।

शम्भू प्रसाद शर्मा, सोडाला, जयपुर (राज.)

नेक लोगों की संगत से हमेशा भलाई ही मिलती है क्योंकि हवा जब फूलों से गुजरती है तो वह भी खुशबूदार हो जाती है

सच्चा दोस्त कौन?

ब्रह्माकुमारी उर्मिला, शान्तिवन (आबू रोड)

खून के रिश्ते मनुष्य को जन्म से ही मिलते हैं। आयु की वृद्धि के साथ इन रिश्तों में भी चाहे-अनचाहे वृद्धि होती रहती है। परन्तु एक रिश्ता ऐसा है जिसका खून से कोई लेना-देना नहीं है पर यह खून से भी ज्यादा करीब है और यह रिश्ता है सखा, दोस्त, मित्र का रिश्ता। यह जन्म के साथ आरम्भ नहीं होता परन्तु मरते दम तक हमें बाँधे रखता है। किसी आकर्षण में बंधकर हम कब, किसके, कितना नजदीक चले गए, यह शायद हम भी बता न सकें पर मन कहता है, उसके साथ सुकून मिलता है। माँ की शीतल गोद से निकलने के बाद पहला-पहला मेरापन इसी दोस्त के साथ जुड़ता है। यह सहपाठी भी हो सकता है और सह-वासी भी।

तू चिन्ता मत कर, मैं हूँ ना

खेल-कूद का भागीदार दोस्त से अच्छा और कौन हो सकता है? बड़ों को ना तो फुर्सत है, ना शरीर में वो लचीलापन। खेल का भागीदार धीरे-धीरे दिल की भावनाओं का भी भागीदार बन जाता है। जो भाव कहीं ना बाँटा जा सके उसे दोस्त से बाँटना सरल है। यह दोस्त ही है जो प्यार से हाथ पकड़कर कहता है, तू चिन्ता मत कर, मैं हूँ ना। मेरे होते चिन्ता कैसी? अरे तू एक बार मुस्कराकर दिखा दे, बाकी सब मेरे पर छोड़ दे।

भगवान की दोस्ती सीमाओं से परे

मानव की मानव से दोस्ती से इतिहास भरा पड़ा है। अकबर-बीरबल की दोस्ती, राणाप्रताप और भामाशाह की दोस्ती – इन दोस्तों ने जरूरत पड़ने पर सबकुछ न्योछावर कर दिया था। मानव से भगवान की दोस्ती की कहानियाँ भी कम नहीं हैं। भगवान को हमने कहा, त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव' अर्थात् माता-पिता, भाई होने के साथ-साथ सच्चा सखा भी भगवान है। यादगार शास्त्रों में भगवान के सखा रूप के तीन सुप्रसिद्ध प्रसंग हैं –

1.श्रीकृष्ण-सुदामा 2.श्रीराम-सुग्रीव 3.श्रीकृष्ण-अर्जुन। इन तीनों में से एक निर्धन ब्राह्मण है, दूसरा वनवासी है और तीसरा राजकुमार है। भावार्थ है कि भगवान की दोस्ती किन्हीं सीमाओं में बंधी हुई नहीं है। वे सबकी ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाते हैं। श्रीमद्भगवद् गीता में भगवान ने कहा है, ''मैं सभी का सुहृद हूँ।''

'मानस' में मित्रता

रामचरित मानस के किष्किन्धा कांड में राम और सुग्रीव की मित्रता का वर्णन है। सुग्रीव, श्रीराम से कहते हैं, पहले मैं आपकी भार्या को छुड़ाने में सहायता करूँगा, फिर आप मेरी भार्या को छुड़ाने में सहायता करें। इस पर श्रीराम मित्रता का आदर्श प्रस्तुत करते हुए कहते हैं, आप मेरी भार्या को छुड़ाने में सहायता करें, फिर मैं आपको आपकी भार्या और राज्य दिलाऊँ, यह तो किसी चतुर व्यापारी का कर्म है। राजनीति के नियम स्वार्थ पर आधारित हैं। मेरी प्रकृति में स्वार्थ का नाम नहीं है। मैं तो सुग्रीव से ऐसा नाता जोड़ना चाहता हूँ जिसमें कोई

शर्त नहीं, लेन-देन नहीं, गिनती नहीं, स्वार्थ की सीमा से परे का नाता, इसमें एक ही वस्तु का आदान-प्रदान होगा और वह है प्रेम। सन्धी राजाओं में होती है पर मित्रता तो राजा और रंक में भी हो सकती है। मित्र यह नहीं देखता कि सामने वाले के पास धन है या नहीं, वह शक्तिशाली है या नहीं, मित्रता अति प्रिय वस्तु है। मित्र, मित्र के लिए प्राण भी न्योछावर कर सकता है। तुलसीदास जी ने 'मानस' में मित्रता के गुणों का सुन्दर वर्णन इस प्रकार किया है –

जे न मित्र दुख होहि दुखारी।
तिन्हहि विलोकत पातक भारी।।
निज दुख गिरि सम रज करि जाना।
मित्रक दुख रज मेरु समाना।।
कुपथ निवारि सुपंथ चलावा।
गुन प्रगटे अवगुनन्हि दुरावा।।
विपतिकाल कर सतगुन नेहा।
श्रुति कह संत मित्रगुन एहा।।
आगे कह मृदु बचन बनाई।
पाछें अनहित मन कुटिलाई।।
जा कर चित अहि गति सम भाई।
अस कुमित्र परिहरेहि भलाई।।

भावार्थ यह है कि जो अपने मित्र को विपदा में देख द्रवित नहीं होता, ऐसे मानव को देखने भर से ही भारी पाप लगता है। सच्चा मित्र अपने पहाड़ सम दुख को धूल समान समझता है और मित्र के धूल समान दुख को पहाड़ समान समझता है। सच्चा मित्र बुरे रास्ते से हटाकर श्रेष्ठ मार्ग की ओर ले चलता है। वह मित्र के गुणों का बखान करता है और अवगुणों को छिपा लेता है। विपत्ति आने पर वह अपने मित्र से सौगुणा अधिक प्रेम करता है। इसके विपरीत, जो सामने मीठा बोलता है और पीठ पीछे बुराई करता है, मन में कपट रखता है, जिसके मन की गति साँप की तरह विषैली है, ऐसे मित्र को त्यागने में ही भलाई है।

बालू और पत्थर

एक बार दो मित्र घूमने निकले। एक आयु में थोड़ा बड़ा था, दूसरा छोटा था। सफर के दौरान दोनों में किसी विषय पर बहस हो गई। इस पर बड़े को क्रोध आ गया। उसने छोटे वाले के गाल पर थप्पड़ मार दिया। छोटा कुछ बोला नहीं परन्तु रास्ते में एक ऊँचे रेतीले टीले को देखकर उस तरफ गया और बालू पर लिख दिया, 'आज मेरे मित्र ने क्रोध में मुझे थप्पड़ मारा।' इसके बाद दोनों फिर चलने लगे। चलते-चलते पसीना आया, गर्मी लगने लगी तो नहाने के लिए एक तालाब में उतर गए। तालाब में काई जमी थी। छोटे का पाँव फिसल गया और वह डूबने लगा। तभी बड़े वाले ने झट से बचा कर उसे पानी से बाहर निकाल लिया। छोटा बहुत खुश हुआ। तभी उसे तालाब के किनारे एक पत्थर दिखाई दिया। उसने उस पर लिख दिया,'आज मेरे मित्र ने मेरी जान बचाई।' तब बड़े ने पूछा, भाई, क्या बात है, कभी तुम बालू पर कुछ लिखते हो, कभी पत्थर पर? छोटे ने उत्तर दिया, सफर में हम दोनों के बीच कोई बात हो जाती है तो उसे शेयर करने के लिए कोई तीसरा तो है नहीं इसलिए मन को हल्का करने के लिए कभी बालू का सहारा लेता हूँ, कभी पत्थर का। परन्तु इतना ध्यान अवश्य रखता हूँ कि नकारात्मक घटना बालू पर लिखूँ ताकि हवा के एक झोंके के साथ उड़ जाए और सकारात्मक घटना पत्थर पर लिखूँ ताकि यादगार बन जाए।

मित्र की गलतियों को चित्त पर न रखें

किसी ने ठीक कहा है, एक साल में 50 मित्र बनाना सरल है परन्तु एक ही मित्र से 50 साल तक निभा लेना बड़ी बात है। निभाने की शक्ति तब आती है जब हम मित्र के अन्तर्मन को समझ लेते हैं। दोस्त जैसा भी है, उसको उसी रूप में स्वीकार कर लेते हैं, जैसे कि माँ अपने नवजात को स्वीकार कर लेती है। दोस्त के राजों को सार्वजनिक न करें। उसके सुझावों का आदर करें। यदि सुझाव अति उत्तम हैं तो सार्वजनिक रूप से प्रशंसा करें। न तो मित्र की कमजोरी का नाजायज फायदा उठाएँ, न ही उसे गलत समझें, न ही उसकी गलतियों का फोल्डर बनाकर चित्त पर

रखें। पूरे साहस के साथ परिस्थितियों का सामना करना सिखाएँ।

दोस्ती का भाव स्वत: स्फुरित भाव है

दोस्ती का हाथ पाने का सबसे अच्छा तरीका है, दोस्ती का हाथ बढ़ाइये। दोस्ती का आधार हैं सिद्धांत, उन पर अडिग रहिए। मित्र की चापलूसी न कीजिए। उसकी कमियों के प्रति उसे जागरूक भी कीजिए। किसी ने यह भी उचित ही कहा है, अपने दुश्मनों को खत्म करने का सबसे उचित तरीका है कि उन्हें दोस्त बनालो। **आप शत्रु से भी प्यार करें परन्तु मित्र से कभी भी नफरत न करें। हजारों दुश्मन मित्र बन जाएँ पर एक भी मित्र दुश्मन न बने, यह ध्यान अवश्य रखें।** किसी पर दबाव डालकर या भय दिखाकर उसे दोस्त न बनाएँ, दोस्ती का भाव स्वत: स्फुरित भाव है। श्रेष्ठ चरित्र वह चुम्बक है जिसकी तरफ हजारों खिंचे चले आते हैं और ता उम्र उस चुम्बकीय व्यक्तित्व से चिपके-से रह जाते हैं। गुणों के धनी को गुणवान मित्र अपने आप मिल जाते हैं।

कपटी से मित्रता न करें

संत कबीरदास कहते हैं,

''कपटी मित्र न कीजिए, पेट पैठि बुधि लेत।
आगे राह दिखाय के, पीछे धक्का देत।''

इसका अर्थ है कि कपटी आदमी से मित्रता कभी न कीजिये क्योंकि वह पहले पेट में घुस कर सभी भेद जान लेता है और फिर आगे की राह दिखाकर पीछे से धक्का देता है। सच बात तो यह है कि मित्र ही मनुष्य को उबारता है और मित्र ही डुबोता है इसलिये मित्रों का संग्रह करते समय उनके व्यवहार के आधार पर पहले राय अवश्य करनी चाहिए। ऐसे अनेक लोग हैं जो प्रतिदिन मिलते हैं पर वे मित्र नहीं कहे जा सकते। आजकल के युवाओं को तो मित्र की पहचान ही नहीं है, क्यों? इसलिए कि साथ-साथ इधर-उधर घूमना, पिकनिक मनाना, शराब पीना या शैक्षणिक विषयों का अध्ययन करना, मित्रता का प्रमाण नहीं है। ऐसे अनेक युवक शिकायत करते हुए मिल जाते हैं कि 'अमुक के साथ हम रोज पढ़ते हैं, वह हमसे नोट्स लेता पर अपने नोट्स देता नहीं है।'

सारी दुनिया को गलत कभी न समझें

अनेक युवक-युवतियाँ जब अपने मित्र से हताश होते हैं तो उनका दिल टूट जाता है। इतना ही नहीं, उनको सारी दुनिया ही दुश्मन नजर आने लगती है लेकिन इस चकाचौंध की दुनिया में ऐसा भी देखा जाता है कि संकट पड़ने पर अजनबी भी कई बार सहायता कर देते हैं। इसलिये किसी एक से धोखा खाने पर सारी दुनिया को ही गलत कभी नहीं समझना चाहिए। अगर किसी व्यक्ति की आदत ही दूसरे को धोखा देने की हो तो फिर उससे मित्रता के धर्म के निर्वहन की आशा करना ही व्यर्थ है। संत कबीरदास जी का एक अन्य दोहा है, जो कहता है,

''कबीर तहाँ न जाईय, जहाँ न चोखा चीत।
परपूटा औगुन घना, दिखे ऊपर मीत।''

भावार्थ है कि ऐसे व्यक्ति या समूह के पास ही न जायें जिनमें निर्मल चित्त का अभाव हो। ऐसे व्यक्ति सामने मित्र बनते हैं पर पीठ पीछे अवगुणों का बखान कर बदनाम करते हैं। जिनसे हम मित्रता करते हैं उनसे सामान्य वार्तालाप में हम ऐसी अनेक बातें कह जाते हैं जो घर-परिवार के लिए महत्वपूर्ण होती हैं और जिनके बाहर आने से संकट खड़ा होता है। कथित मित्र इसका लाभ उठाते हैं। आधुनिक अपराधिक इतिहास पर दृष्टिपात करें तो पायेंगे कि अपराध और धोखे का शिकार आदमी मित्रों की वजह से ही होता है। अत: जान लें कि प्रतिदिन कार्यालय, व्यवसायिक स्थान तथा शैक्षणिक स्थानों पर मिलने वाले सभी लोग मित्र नहीं होते। उनसे सामान्य व्यवहार और वार्तालाप तो अवश्य करें परन्तु उनको बिना परखे दिल के भेद न बताएँ।

भगवान बढ़ा रहे हैं दोस्ती का हाथ

मित्रता के इतिहास में एक नया अध्याय जुड़ता है वर्तमान संगमयुग पर जब सृष्टि के रचयिता, पालक, करनकरावनहार, त्रिलोकीनाथ परमात्मा, पिताश्री

प्रजापिता ब्रह्मा के तन में अवतरित होकर मानव मात्र की ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाते हैं और कहते हैं, मुझे यूज करो, मेरी शक्तियों को यूज करो। परम हितैषी, परम ऑफर करते हैं कि जो मेरा है, वो सब तुम्हारा है, उस पर अधिकार रखो। जैसे एक डाउन बैटरी वाली गाड़ी, दूसरी डाउन बैटरी वाली गाड़ी के साथ बांध भी दी जाए तो कौन किसको खींचे? इसी प्रकार डाउन बैटरी वाली एक आत्मा, डाउन बैटरी वाली दूसरी आत्मा को मित्र बना भी ले तो कौन, किसकी मदद करे? परन्तु यदि ये दोनों आत्माएँ, पावर हाउस परमात्मा से मित्रता कर लें तो दोनों चार्ज होकर, एक-दो का साथ बखूबी निभा सकती हैं। सुदामा, सुग्रीव, अर्जुन आदि की कहानियाँ, संगमयुग में धरती पर पधारे भगवान से मित्रता करने और निभाने की यादगार कहानियाँ हैं। चरित्र तो अनेक होते हैं परन्तु यादगारों में नाम कोई एक का ही प्रत्यक्ष होता है।

हर दिन 'मित्रता दिवस'

संगमयुग पर हम भगवान से जुड़कर आत्मा रूपी बैटरी को इतना भर लेते हैं कि पूरे कल्प उसकी शक्ति कार्य करती रहती है। यह भगवान से दोस्ती करने का सुनहरा अवसर है। उसे अपना दिलदार बनाएँ, उससे दिल का सौदा कर लें। अपने दिल के राज़ बताकर उसे हमराज़ बना लें। उस दिलबर को दिल में बसाकर, दिल के द्वार अन्य वस्तु, व्यक्तियों के आकर्षण से बन्द कर लें। उसके स्नेह के झरनों में निरन्तर समाए रहें ताकि कोई स्वार्थ की प्रीत अपनी ओर खींचे ना। सारे मेरे-मेरे छोड़ उस एक में मेरा-पन ले आएँ तो सब कुछ हमारा हो जाएगा। परमात्मा पिता की ओर से आप सभी को ऐसी रूहानी अलौकिक मित्रता की बार-बार बधाई। एक दिवस नहीं, परमात्मा पिता के साथ हर दिन 'मित्रता दिवस' है। ❖

श्रद्धांजलि

मुम्बई, वडाला सेवाकेन्द्र पर सेवारत, मन, वचन, कर्म से बापदादा को प्रत्यक्ष करने वाली, सहनशीलता की मूर्त, सर्व की स्नेही तथा रहमदिल दादी रुक्मिणी 14 वर्ष की आयु में, सन् 1936 में पिताश्री ब्रह्मा बाबा द्वारा स्थापित ओम मण्डली में शामिल हुई। आपको शास्त्रों का भी अच्छा ज्ञान था। दादी आलराउन्डर आपकी बुआ लगती थी। पिछले कुछ समय से आपको हृदय की तकलीफ थी। 'अब घर जाना है' इस महामन्त्र की स्मृति के साथ 17 मई, 2018 को आप बापदादा की गोद में चली गई। ऐसी यज्ञ की आदिरत्न, बापदादा की आज्ञाकारी, वफादार, दिलतख्तनशीन आत्मा को सर्व दैवी परिवार श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

जाग! जाग! रक्षा कर अपनी

ब्रह्माकुमार देवेन्द्र कुमार तिवारी,
शान्ति नगर, एटा (उ.प्र.)

ओ माली मत सो आलस में,
जाग! जाग! रक्षा कर अपनी।
पहरेदार वाटिका का तू,
कैसी तेरी ऐसी करनी।।

भूल रहा क्यों, वचन पिता से,
दिये शपथ दे, मान रखूँगा।
तेजस्वी, पुरुषार्थी बनकर,
धरा सुगन्धित सदा करूँगा।।

मूषक (माया) प्रबल वाटिका में हैं,
कुतर रहे वे बीज सशंकित।
सर्वनाश कर रहे देख ले,
क्यों सोता है पार्थ निशंकित।।

तुमको दी हैं दिव्य कलायें,
अस्त्र, शस्त्र से किया सुसज्जित।
मार भगा इन मूषक दल को,
वीर साहसी क्यों तू लज्जित।।

अहंकार के वशीभूत हो,
माया ने क्या किया पंगुवत।
शान्ति, सौम्यता से हो निवृत्त,
झंझाओं ने किया वशीकृत।।

लोभ-मोह की जंग छुड़ाकर,
क्रोध छुड़ा, मन शुद्ध बना ले।
रक्षा कर बीजों की प्रतिपल,
सुमन वाटिका सरस बना ले।।

ओ माली मत सो आलस में,
जाग! जाग! रक्षा कर अपनी।
पहरेदार वाटिका का तू,
कैसी तेरी ऐसी करनी।।

बेहद की वैराग्य वृत्ति

ब्रह्माकुमार भारत भूषण, ज्ञान-मान सरोवर, पानीपत

वैराग्य एवं तपस्या का बड़ा गहरा सम्बन्ध है। जब संसार और सांसारिक वस्तुओं से वैराग्य आता है तभी परमात्मा पर बुद्धि एकाग्र हो सकती है। इतिहास साक्षी है, अनेक तपस्वियों को वैराग्य आने पर वे ईश्वरीय लगन में मगन हो गए जैसे कि महात्मा बुद्ध, राजा भर्तृहरि, राजा गोपीचन्द आदि-आदि। इसलिए योग की उच्च स्थिति बनाने के इच्छुक पुरुषार्थियों को वैराग्य-वृत्ति अपनानी होगी। इस लेख में 16 प्रकार के वैराग्य की चर्चा की जा रही है –

1.पुरानी देह से वैराग्य – यह शरीर तमोप्रधान और पतित है। इसके अन्दर हाड़, माँस, खून, गंद, मलमूत्र भरा हुआ है। इस गंद के लोथड़े पर आकर्षित होना तो महामूर्खता है। इस देह के मिथ्या अभिमान से ही पाँच विकार पैदा होते हैं। प्रभु मिलन के लिए इसको भूलना अति आवश्यक है। इसलिए इस देह को सेवार्थ प्रयोग करें, श्रेष्ठ पुरुषार्थ भी इस द्वारा करें लेकिन श्रेष्ठ तपस्या के लिए इस पुरानी पतित देह से बुद्धि का लंगर उठ जाये उस परमपिता परमात्मा की ओर।

2.पुरानी दुनिया से वैराग्य – सृष्टि-चक्र के अंत में यह कलियुगी दुनिया, तमोप्रधान एवम् अधिकांश पापात्माओं की दुनिया है। इसकी चकाचौंध से प्रभावित होना तो बेवकूफी है। इसका वैभव और वस्तुएँ तो विनाशी हैं। इनसे प्राप्त सुख भी क्षणभंगुर है। इसलिए इस पुरानी दुनिया से बुद्धि उपराम हो जानी चाहिए। ज़रा विचार कीजिये, लाखों अस्पतालों में करोड़ों रोगी कैसे चिल्ला रहे हैं। कितने व्यक्ति झुग्गी-झोपड़ी एवम् गंदे नालों पर निवास कर रहे हैं। जो अच्छे आवासों में निवास कर रहे हैं, वे भी तनावग्रस्त जीवन व्यतीत कर रहे हैं इसलिए यह तो सचमुच दुखधाम है। तो अब अपने से कहें, चल रे मन-बुद्धि, इस दुखधाम से वैराग्य धारण कर और शान्तिधाम-सुखधाम को याद कर।

3.पुराने संबंधों से वैराग्य – आध्यात्मिक पुरुषार्थियों के लिए दैहिक सम्बन्ध पुराने सम्बन्ध हैं जो प्रतीत तो सुखदायक होते हैं लेकिन हैं दुखदायी। इन रिश्ते-नातों में फँसी बुद्धि ईश्वर से रिश्ता अनुभव नहीं कर सकती। पक्का कीजिये कि मेरा तो एक रिश्तेदार शिव परमात्मा है क्योंकि कल्प के प्रारम्भ में मैं आत्मा उसी के पास से आई हूँ और कल्प के अन्त में भी उसी के पास जाना है। ये लौकिक सम्बन्ध तो निमित्त मात्र निभाने हैं। ये तो सभी सम्बन्ध स्वार्थ के हैं। निस्वार्थ सेवाधारी तो एक शिव परमात्मा ही हैं इसलिए इन सबसे बुद्धि का नाता तोड़ एक शिव परमात्मा से जोड़ना ही समझदारी है। कितना सुन्दर किसी ने कहा है –

सैकड़ों अकलमन्द मिलते हैं, काम के लोग चंद मिलते हैं,
मुसीबत में भगवान के सिवाए सबके दरवाजे बंद मिलते हैं।

4.पुराने समाचारों से वैराग्य – कई लोग इस कलियुगी तमोप्रधान दुनिया के समाचारों को पढ़ने, सुनने एवम् देखने में बहुत रुचि लेते हैं। अपना अधिकांश समय इसी में बर्बाद भी करते हैं। वे घण्टों समाचार-पत्रों को पढ़ते रहेंगे अथवा पुनः - पुनः न्यूज चैनल्स देखते रहेंगे। हम भली-भाँति परिचित हैं कि हर बुरी से बुरी खबर को प्राथमिकता दी जाती है, जिसको पुनः- पुनः देखने व सुनने से व्यक्ति बुराई की ओर अग्रसर होता है। इसलिए इससे भी वैराग्य कि मुझे इस असार संसार का कोई समाचार नहीं सुनना है।

5.पुराने संस्कार-स्वभाव से वैराग्य – विकारों एवम् व्यसनों की अधीनता से हमारे जो संस्कार-स्वभाव बन गये हैं, वे ही पुराने स्वभाव-संस्कार हैं जो आध्यात्मिक पुरुषार्थ में बाधा बने हुए हैं। दिव्य गुणों से सम्पन्न संस्कार-स्वभाव ही नये सतयुगी दैवी संस्कार-स्वभाव हैं। इस संसार में मनुष्य के दुखी होने का कारण विकारों की अधीनता है। वे ही मनुष्य के संस्कार-स्वभाव बिगाड़ देते हैं। यह कितनी

बड़ी विडंबना है कि मनुष्य रोजाना इन विकारों के गर्त में फँसता है, धोखा खाता है, पछताता है और पुन: फँसता रहता है। इसलिए अब इनसे वैराग्य चाहिए।

6.पुरानी बातों से वैराग्य – जो बातें बीत चुकी हैं, पुरानी हो चुकी हैं, ऐसी बीती हुई बातों से भी वैराग्य चाहिए। पुन: - पुन: बीती हुई बातों और घटनाओं का चिंतन करते रहने से बहुत समय बर्बाद होता है। इसलिए पास्ट इज पास्ट। भूतकाल की बातों का ज्यादा चिंतन करेंगे, तो मनोविकारों रूपी भूत चिपट जायेंगे।

7.अपने स्थान से वैराग्य – जहाँ भी हम रहते हैं, रहते-रहते उस स्थान, गाँव, शहर व राज्य से भी लगाव हो जाता है। अत: पुरुषार्थियों का बुद्धि रूपी लंगर इन लौकिक व अलौकिक स्थानों से भी उठा हुआ हो। फरिश्तों का स्थान है सूक्ष्म वतन और आत्माओं का स्थान है मूल वतन, उनकी स्मृति में अधिक रहें। कार्य अर्थ धरा पर आयें, फिर चले अपने वतन की ओर, ऐसी मनोभूमि बना लें।

8.विकल्प एवम् व्यर्थ संकल्पों से वैराग्य – जिनसे मनुष्य जन्म-जन्मान्तर गिरता आया है, जिन्होंने मनुष्य का सारा दिव्य शृंगार बिगाड़ दिया है, जिन्होंने पूरा जीवन दुखी एवम् अशांत कर दिया है, ऐसे विकारी एवम् व्यर्थ संकल्पों से भी वैराग्य चाहिए। दृढ़ संकल्प करें कि इन व्यर्थ संकल्पों ने मुझे बहुत दुखी किया है, अब मुझे सदैव शुद्ध संकल्पों में, ज्ञान के संकल्पों में और प्रभु मिलन के संकल्पों में मन को लगाना है।

9.सुख-सुविधाओं से वैराग्य – 'सादा जीवन, उच्च विचार' की कहावत के अनुसार मनुष्य को सादगी से जीवन व्यतीत करना चाहिए। जितना सुख-सुविधाओं के अधीन होते हैं, उतना ही आध्यात्मिक पुरुषार्थ कम हो जाता है। साधनों का प्रयोग करते हुए भी इनसे वैराग्य चाहिए।

10.खाद्य पदार्थों से वैराग्य – कई व्यक्तियों को खाने-पीने की चीजों का बड़ा शौक होता है। उन्हें विभिन्न मिठाइयाँ, गोल-गप्पे, समोसे, पकौड़े तथा रसवान पकवान बहुत आकर्षित करते हैं। इससे स्वास्थ्य में भी गिरावट होती है और आध्यात्मिकता का स्तर भी नीचे आता है। इसलिए आकर्षक खाद्य पदार्थों से भी वैराग्य चाहिए।

11.साधारण पुरुषार्थ से वैराग्य – सम्पूर्ण स्थिति पाने के इच्छुक पुरुषार्थी को साधारण पुरुषार्थ से भी वैराग्य होना चाहिए। ढीला-ढाला धीमी गति का पुरुषार्थ छोड़, तीव्र गति वाला ज्वालामुखी पुरुषार्थ करना चाहिए। अपना स्थान अति तीव्र पुरुषार्थियों में निश्चित कर लेना चाहिए। काम चलाऊ पुरुषार्थ नहीं बल्कि योग-तपस्या एवम् सच्ची सेवा जी भरकर करनी चाहिए। अपने तीव्र पुरुषार्थ की योजना स्वयं बनानी चाहिए।

12.घूमने-फिरने से भी वैराग्य – कई लोग घूमने-फिरने के शौक में जिंदगी का काफी हिस्सा बर्बाद कर देते हैं। वे किसी भी तरीके से समय निकाल कर विभिन्न शहरों में घूमने का शौक पूरा करते हैं। कभी पर्वतीय स्थलों पर, कभी विदेशों में तो कभी ऐतिहासिक स्थलों पर घूमते हैं। इस प्रकार जीवन का अंत आ जाता है। फिर मुँह से निकलता है, इतना अमूल्य जीवन कुछ श्रेष्ठ पुरुषार्थ करने की बजाये घूमने में ही बर्बाद कर दिया। इसलिए इससे भी वैराग्य चाहिए।

13.हद की सेवाओं से वैराग्य – अपने जीवन को केवल अपने सेवास्थल अथवा अपने जोन अथवा केवल अपने देश के प्रति लगाना भी हद है। यह जीवन विश्व-सेवा प्रति अर्पण हो। अपनी सभी सेवाओं को विश्व सेवार्थ ही समझना है। सदा बेहद का सेवाधारी बनना है। इसी प्रकार, केवल एक प्रकार की सेवा नहीं, आलराउंडर सेवाधारी बनना है। वाचा, कर्मणा और धन से भी सेवा करनी है। ऐसा बेहद का सेवाधारी बनने के लिए हद की सेवाओं से वैराग्य चाहिए।

14.हद की कामनाओं से वैराग्य – सांसारिक इच्छायें मनुष्य को अच्छा बनने नहीं देतीं। इसलिए हद की कामनाओं से भी वैराग्य चाहिए। एक इच्छा पूरी हुई तो

दूसरी पैदा हो गयी। दूसरी पूरी हुई तो तीसरी पैदा हो गयी। इस प्रकार इच्छाओं का कोई अंत नहीं। हद के मान-शान की इच्छा, हद के पद-पोजिशन की इच्छा, इन सबसे वैराग्य धारण कर सदा आध्यात्मिक प्रगति करनी है।

15. भक्ति मार्ग से वैराग्य – भक्ति मार्ग के अनेक रीति-रस्म, अन्ध-विश्वास आदि से भी वैराग्य चाहिए। ज्ञान मार्ग में चलने के पश्चात् भी मनुष्य की भक्ति मार्ग की भावनाएँ समाप्त नहीं होतीं जैसे कि योग में आँखें बंद कर बैठना, कुछ मन्नतें मांगना, व्रत, जप, पाठ आदि करना, विभिन्न त्योहारों पर रीति-रस्म करना, गंगा स्नान करना आदि-आदि। अब इन सब बातों से भी वैराग्य चाहिए।

16. टकराव एवम् बदले की भावना से वैराग्य – कई लोगों के टकराव के संस्कार हैं। वे कभी एक से, कभी दूसरे से टकराते ही रहते हैं। जहाँ रहते हैं वहाँ के लोगों से व कार्यस्थल के साथियों से भारी टकराव रखते हैं। इस प्रकार वे टकराव में ही जिंदगी बर्बाद कर बैठते हैं। सदा याद रखें, मुझे टकराव से एवम् बदला लेने की भावना से वैराग्य धारण कर खुद को बदलना है। ❖

आवश्यक सूचना

सरोज लालजी महरोत्रा ग्लोबल नर्सिंग कॉलेज में बी.एस.सी.नर्सिंग (4 वर्षीय) एवं ग्लोबल हॉस्पिटल स्कूल ऑफ नर्सिंग में जी.एन.एम. (3 वर्षीय) कोर्स में प्रवेश प्रारंभ हो चुका है।

योग्यता : बी.एस.सी.नर्सिंग

आयु : 31 दिसम्बर 2018 तक

17-28 वर्ष (महिलाओं के लिए)

17-25 वर्ष (पुरुषों के लिए)

फिजिक्स, केमेस्ट्री एवं बायोलॉजी में कम से कम 50 प्रतिशत अंक

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें :

मोबाइल : 8094652109, 8432345230, 9529047341

ई-मेल : slmgnc.raj@gmail.com

योग्यता : जी.एन.एम.

आयु : 31 दिसम्बर 2018 तक

17-34 वर्ष (महिलाओं के लिए)

17-28 वर्ष (पुरुषों के लिए)

साइंस, आर्ट, कॉमर्स में कम से कम 50 प्रतिशत अंक

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें :

मोबाइल : 8094652109, 9887000914, 9649475278

ई-मेल : ghsn.abu@gmail.com

नोट :

फॉर्म जमा कराने की आखिरी तारीख 21 जुलाई 2018

फॉर्म डाउनलोड करने के लिए :

http://www.ghrc-abu.com/global-hospital-school-of-nursing

श्रद्धांजलि

बापदादा के लाडले, मधुबन महायज्ञ में पिछले 40 वर्षों से समर्पित ब्रह्माकुमार रामदयाल भाई, महाराष्ट्र के भण्डारा शहर से मधुबन में समर्पित हुए। कुछ समय आपने पाण्डव भवन में पहरे पर अपनी सेवायें दी। उसके बाद आपका स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। पिछले 4-5 वर्षों से ग्लोबल हॉस्पिटल में ही भरती थे। वहाँ ही आपका इलाज चल रहा था। दिनांक 7 जून, 2018 को रात्रि 10 बजे आप अपना पुराना शरीर छोड़ बापदादा की गोद में चले गये। ऐसे त्यागी, तपस्वी, सेवाधारी भाई को सम्पूर्ण दैवी परिवार अपने श्रद्धा सुमन अर्पित करता है।

गतांक से आगे

महिला सशक्तिकरण

ब्रह्माकुमार नरेश, मुजफ्फरनगर

गुरुदेव रविन्द्रनाथ टैगोर के सफल साहित्यकार बनने में एक नारी की अनोखी भूमिका है। वे तब पद्मा नदी के किनारे शीलदाहा (सियालदह) में निवास करते थे जहां का शांत इलाका उनकी जमींदारी में आता था। वहां रहकर वे लेखन कार्य किया करते थे। वहीं वैष्णव भक्ति से जुड़ी एक स्त्री रहती थी, जिसकी अटूट भक्ति को देख कर लोग उसे पागल समझ लेते थे। वह स्त्री प्रतिदिन रविन्द्रनाथ के मकान के सामने आकर खड़ी हो जाती थी और थोड़ी देर के बाद बगैर कुछ कहे वापिस चली जाती थी। एक दिन जैसे ही वह आई, गुरुदेव अपने दोमंजिला मकान की खिड़की में आकर खड़े हो गए। उन्हें देख कर वह बोली, ठाकुर, तुम नीचे कब उतरोगे? गुरुदेव नीचे उतर आए और उस स्त्री को प्रणाम करके बड़े आदर और प्रेम से उसके चरणों के समीप बैठ गए। स्त्री ने उन्हें कुछ देर तक देखा, फिर चली गई। उस दिन के बाद वह स्त्री किसी भी दिन अन्दर आ जाती और गुरुदेव उसके चरणों में बैठ जाते। उनके बीच कोई विशेष संवाद तो नहीं होता था परन्तु गुरुदेव को बहुत सुकून मिलता था और उनमें साहित्यिक प्रेरणाएं पैदा हुआ करती थीं। गुरुदेव ने इस बात को स्वीकार किया है कि उनके जीवन व उनकी कविताओं पर उसका प्रभाव पड़ता था। उससे मुलाकात से पहले गुरुदेव मानो किसी पर्वत पर अकेले रहा करते थे और अब वे समतल पर उतर कर यथार्थ जीवन में आ गए थे। उस स्त्री का प्रथम मुलाकात में यह कहना कि ''ठाकुर, तुम नीचे कब उतरोगे" यह दर्शाता है कि रविन्द्रनाथ की सोच में साहित्य के साथ ठाकुरपना भी था जबकि साहित्यकार को धरातल का होना चाहिए। उस स्त्री से मिली प्रेरणाओं ने उन्हें यथार्थ साहित्यकार बनाया।

स्थाई निदान होगा राजयोग व चरित्र निर्माण से

जब तक लिंग-समानता (Gender Equality) को घर-घर में दिल से स्वीकार न कर लिया जाये और पुरुष ही श्रेष्ठ है, इस मानसिकता को दिमाग से न निकाल दिया जाये, तब तक महिलाओं को पुरुष की बराबरी का दर्जा प्राप्त नहीं हो सकता। इसके लिए जन-जन को जाग्रत करना होगा। व्यक्ति समाज की ईंट है और समानता के समाज के पुनर्निर्माण के लिए नई व सकारात्मक सोच रूपी गारे से ही इन ईंटों की चिनाई होनी चाहिए। पुराने मकान को तोड़ कर जब नया मकान बनाया जाता है तो पुरानी ईंटों से दीवारें खड़ी नहीं की जाती बल्कि नई ईंटें लगाई जाती हैं। ईंटें एक ही आकार-विस्तार की होती हैं, छोटी-बड़ी नहीं। समाज भी स्त्री व पुरुष की बराबरी से बनता है। तो आवश्यकता है समग्र व व्यापक प्रयास की। इसके लिए सामाजिक चेतना फैलाने हेतु जितने भी साधन हैं, सभी का उपयोग करना होगा, चाहे वह इन्टरनेट हो, रेडियो-टेलिविजन हो, फिल्म-इन्डस्ट्री हो, जिला-स्तर के विकास कार्यक्रम हों, पंचायत-स्तर के विकास कार्यक्रम हों, स्कूल-कॉलेज के सांस्कृतिक-कार्यक्रम हों, नुक्कड़-सभाएं हों या मोहल्ले या कॉलोनियों के संचालन के लिए बनी छोटी-छोटी सोसायटी ही क्यों न हों। भाव यह है कि यह अभियान आन्दोलन की शक्ल ले ले जिससे हर-एक नागरिक के अन्दर एक क्रांति घटित हो। यह भी समझना होगा कि समस्या का स्थाई निदान राजयोग के ज्ञान व चरित्र निर्माण में छिपा है।

आगे बढ़ हासिल करने वाले को मिलते हैं अधिकार

उपरोक्त के साथ ही अनर्गल रूढ़िवादी परम्पराओं के प्रति समर्पित ऐसे हठधर्मियों की पहचान भी करनी होगी, जो नारी को सम्मान व समानता का अधिकार नहीं देने के लिए कुछ भी कर गुजरने को उतारू रहते हैं। वे बदलते समय के साथ चलने को तैयार नहीं होते और पुरानी

दकियानूसी परम्पराओं को नई सोच के युवाओं पर थोपना चाहते हैं। इसके लिए आध्यात्मिक शिक्षा की आवश्यकता को समझना होगा। शिक्षा से मनुष्य का दृष्टिकोण, सोच व मान्यताएं सकारात्मक दिशा प्राप्त करती हैं और उसकी मानसिकता में उत्थान आता है। शिक्षा से ही कन्याओं व महिलाओं को उनके अधिकार व कर्त्तव्यों का बोध होता है और वे पुराने पारम्परिक बंधनों को तोड़ने को प्रेरित होती हैं। अधिकार उन्हें ही प्राप्त होते हैं जो आगे बढ़ कर इन्हें हासिल करते हैं अन्यथा नारी को बैठे-बिठाए अधिकारिनी बनाने को, उसके पास चल कर कोई आने से रहा। शिक्षा मात्र स्कूल की पढ़ाई से नहीं बल्कि अच्छे संग व अच्छी वार्ताओं से भी मिलती है। जो भी नारी कुछ पाने को आगे बढ़ी है, उसे कुछ विशेष मिला जरूर है।

सत्य की छोटी-सी चिंगारी

रॅल्फ वाल्डो इमर्सन के व्याख्यानों में एक बूढ़ी धोबिन निरन्तर आया करती थी। लोगों को हैरानी होती थी कि इमर्सन जैसे महान चिन्तक की ज्ञान की गूढ़ बातों को यह अनपढ़ गरीब औरत क्या समझती होगी! एक दिन किसी ने उससे पूछ ही लिया कि इमर्सन की वार्ताओं से आपको क्या समझ में आता है? उस बूढ़ी अनपढ़ धोबिन ने अद्‌भुत उत्तर दिया। वह बोली, ''मुझे उनकी ढेर सारी ज्ञान की बातों से कुछ भी तो समझ में नहीं आता। बस एक बात जो मैं समझ पाई हूँ और जिसने मेरा जीवन बदल दिया है, वह यह है कि मैं भी प्रभु से दूर नहीं हूँ, एक दरिद्र अज्ञानी स्त्री से भी प्रभु दूर नहीं हैं। मैं भी प्रभु के निकट आ सकती हूँ।'' इस उत्तर ने हलचल मचा दी थी। वहां आने वाले लोग सारी बातों को समझने के प्रयास में सत्य की इस छोटी-सी चिंगारी से वंचित रह जाते थे। यदि ब्रह्माकुमारी संस्था की विभिन्न शाखाओं में भोली-भाली माताओं की बाहुल्यता है तो इसके पीछे सत्य की इस छोटी-सी चिंगारी का उन द्वारा समझ पाना भी है। ईश्वर के प्रति आस्था व उससे समीपता के बल से ही नारी इतने बंधनों व बंदिशों के बावजूद सामान्य जीवन जीती है। कुन्ती, शबरी, अहिल्या आदि इसकी मिसाल हैं।

नारियों के कुछ ऐसे रूप हैं जो उन्हें अशक्त बनाते हैं, जैसे कि विधवा, तलाकशुदा, बांझ, अपंग, अनपढ़ आदि। पुरुष ऐसी स्थितियों में उतना अशक्त व त्रस्त नहीं होता जितनी कि नारी होती है। विधवाओं को समाज की मुख्यधारा से जोड़ने और उनका सम्मान कायम रखने के लिए हजारीबाग जिले के उपायुक्त ने अच्छी पहल की है। उन्होंने अपने कार्यालय परिसर में दीदी कैफे खुलवाया है जिसमें 10 गरीब विधवा महिलाएं चाय, पकौड़े, सैंडविच आदि बना कर प्रशासनिक काम से आने वाले लोगों की खिदमत करती हैं। स्वसहायता समूह (Self Help Group) नाम की बैंकों की ऋण योजना के वे समूह ज्यादा सफल हो रहे हैं, जिनमें केवल महिलाओं की ही भागीदारी है। ऐसे छोटे-छोटे प्रयास सराहनीय हैं, परन्तु मात्र इनसे महिलाओं का सशक्तिकरण राष्ट्रीय स्तर पर नहीं हो सकता।

आध्यात्मिक विभाग जरूरी

महिलाएं भारत में कुल कामकाजी वर्ग में मात्र 29 प्रतिशत हिस्सेदारी रख रही हैं परन्तु दीन-हीन व शोषित वर्ग में इनकी हिस्सेदारी 60 से 70 प्रतिशत तक है। भारत में सक्षम-काबिल महिलाओं के होते हुए भी कुल कामकाजी वेतनभोगी वर्ग में महिलाओं की हिस्सेदारी 50 प्रतिशत तक लाने में सरकार विफल रही है। कारण है पारिवारिक बंदिशें व दकियानूसी रूढ़िवादी परम्पराएं, नियोजकों (Employers) की भेदभाव की नीति और सबसे बढ़ कर पारदर्शी संवैधानिक व्यवस्था का अभाव। इस संदर्भ में कोई योजना सरकार ने अब तक न तो बनाई है और न ही लागू की है, क्योंकि ऐसा करना आध्यात्मिक जाग्रति से ही संभव है और सरकार में अभी तक आध्यात्मिकता से संबंधित कोई विभाग बना नहीं है। फिर भी ब्रह्माकुमारियों की आध्यात्मिक सेवाओं पर सरकार का ध्यान जा रहा है।

क्रमशः

इन्द्रियों की गुलामी का दुष्परिणाम

ब्रह्माकुमार डॉ.रमेश चन्द सैनी,
रुड़की (उत्तराखण्ड)

संसार में हितकर और अहितकर दोनों ही प्रकार की वस्तुएँ होती हैं। यह हमारी बुद्धि की परीक्षा है कि हम लाभप्रद चीजों को ग्रहण करें या हानिकारक चीजों को। हर एक प्राणी की तरह मेरी भी परीक्षा हुई परन्तु मैं उसमें असफल रहा। बात सन् 1980 की है। मैं चिकित्सा पेशा छोड़कर, अन्य दो भाइयों के साथ जंगलों का ठेका लेने का व्यवसाय करने लगा। वहाँ मुझे बुरी लत (आदत) पड़ गयी।

जीभ के आगे झुकाया सिर

इन्द्रियों के वश होकर मैंने अपने स्वास्थ्य को नष्ट कर डाला। जीभ को तृप्त करने के लिए स्वादिष्ट मिष्ठान्न-पकवान खाने लगा। दुर्बल मन के मनुष्य जीभ के आगे सिर झुका देते हैं। पेट तो बिगुल बजा देता है कि अन्दर और जगह नहीं है परन्तु जीभ नहीं मानती है और जरूरत से अधिक खाने को मजबूर कर देती है। परिणामस्वरूप पेट काम करने से इंकार कर देता है। पेट के कार्य में बाधा आने से सारे शरीर पर उसका दुष्प्रभाव होता है। मेरे साथ बिल्कुल ऐसा ही हुआ, मुझे कब्ज रहने लगी। Nightus Harnia हो गया। खाना हजम नहीं होता था। बार-बार उल्टियाँ होने लगी, पेट में जलन रहने लगी। हाजमे के लिए चूर्ण-चटनी की जरूरत पड़ने लगी। फिर भी कब्ज का रोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही गया। खाना पचाने के लिए चाय की आदत पड़ गयी। कब्ज के कारण बवासीर भी रहने लगा। खून की कमी से कमजोरी आ गई। प्रकृति का नियम है कि कमजोर को सभी दबाते हैं।

नीरसता का आक्रमण

उसी दौरान सिनेमा देखने के दुष्परिणामों के रूप में दूषित विचारों ने भी मुझे आ दबोचा। देखे हुए चित्रों का चिन्तन करने से वे निरन्तर मन में जमे रहते थे, फलस्वरूप, दोष के भी दर्शन होने लगे। कहावत है कि एक करेला दूसरा नीम चढ़ा। शारीरिक रोग बर्दाश्त नहीं हो रहे थे, अब ऊपर से मानसिक रोगों ने भी आ घेरा। जीवन में नीरसता इतनी आ गई कि प्रसन्नता को भूलता ही चला गया। जिधर देखता था उधर निराशाओं के बादल उमड़ते नज़र आते थे। कहीं से भी आस नहीं बंधती थी। भगवान सभी का रक्षक है, यह विश्वास हटने लगा। निराशा ने मेरे मन को तोड़ डाला। इच्छा हुई कि इस शरीर से पीछा छुड़ाऊँ ताकि कुछ सुख मिले। जीभ के चटोरेपन का कितना बुरा परिणाम होता है, यह मैंने खूब अनुभव किया। काम-वासना, क्रोध और अहंकार आदि विकार भी मन में खूब उछल-कूद करते रहते थे। मुझे अनुभव हो रहा था कि यह सब सद्विवेक के अभाव के कारण संगदोष से हुआ है।

दुखों का पहाड़ टूट पड़ा

इसी बीच मेरे दो साल के बच्चे को अकेला छोड़कर उसकी माँ अपनी अगली यात्रा पर चली गई। एक तो शारीरिक अस्वस्थता और ऊपर से यह दुखों का पहाड़ टूट पड़ा। मैं रात-दिन पश्चाताप की अग्नि में जलने लगा। शहर का कोई ऐसा वैद्य और डॉक्टर न था जिससे मैंने दवा न ली हो। दवाई से मेरा मन ऊब चुका था। भगवान का सहारा भी दिखाई नहीं देता था अत: अपने बचाव की कोई सूरत नजर नहीं आ रही थी। दुख की अग्नि में जलता हुआ मैं अपने भाग्य को कोसता रहता था।

पैर आगे पर मन पीछे

भाग्य को कोसना, यह कोई दुख की दवा तो नहीं थी। सब रास्ते बन्द जानकर मैंने गंगा मैया की गोद में शरण लेने का निश्चय कर लिया। मुझे यह भी समझ थी कि आत्महत्या कायरता की निशानी है परन्तु मेरे लिए अन्य कोई मार्ग बचा ही नहीं था। यही मार्ग उचित जानकर मैं आधी रात के अंधेरे में घर से चल पड़ा उन इठलाती लहरों के आंचल में विश्राम पाने के लिए। संसार की सभी

समस्याओं को भूलकर मैं एक नये संसार में जाने की कल्पना कर रहा था। पैर आगे बढ़ते जा रहे थे परन्तु मन में कोई कह रहा था कि दो साल की नन्हीं जान को अनाथ छोड़कर जा रहे हो। संसार कहेगा कि यह बच्चा कैसा है, जो माँ और बाप दोनों को खा गया है।

इस खयाल ने कुछ धैर्य बंधाया और मैं उल्टे पैर अपने गाँव गढ़मीपुर आ गया। यह भी विचार आया कि आत्महत्या पाप है, मैं क्यों इस संसार से कायरों की भांति भाग रहा हूँ? इस तरह मेरे 10 साल बीत गये। व्यसनों ने फिर भी पीछा नहीं छोड़ा।

दिल को छू गई ज्ञान की बातें

उन्हीं दिनों ब्रह्माकुमार कृपाल भाई तथा ब्रह्माकुमारी ओमवती बहन हमारे घर में किराये पर आ गये। जीवन में निराशा तो थी ही। ब्रह्माकुमार भाई ने बताया कि तुम्हारा जीवन तो पशुओं से भी बदतर है। इन्द्रियों की गुलामी का यह दुष्परिणाम है। मन बड़ा सूक्ष्म और शक्तिशाली है। मन को काबू करने वाली बुद्धि उससे भी बलवान है। बुद्धि का दाता स्वयं परमपिता शिव है। उनकी शरण में आओ, मन और इन्द्रियाँ तुम्हारे काबू में रहेंगी, तुम उनके शासक बन जाओगे। खाने के लिए नहीं जीओगे, जीने के लिए खाओगे। इच्छा अनुसार जीवनयापन करोगे। अपनी हानि-लाभ को भली-भाँति जानकर लाभकारी को ग्रहण करोगे और हानिकारक का त्याग कर सकोगे। यही सफलता का मार्ग है। अप्राकृतिक जीवन को छोड़ दो। प्रकृति प्रदत्त सात्विक भोजन करो, पवित्र रहो, तुम्हारा स्वास्थ्य सुधर जायेगा। उनकी ये ज्ञान की बातें दिल को छू गयी।

दृढ़ प्रतिज्ञा कर ली

उन्होंने मुझे एक मुरली पढ़ने को दी। कुछ खास समझ में नहीं आयी। फिर उन्होंने ज्ञान का साप्ताहिक कोर्स करने के लिए कहा। कोर्स इसलिए किया कि यह अपने हित की बात थी। कोर्स करते-करते विचारों में परिवर्तन होने लगा। मन में दृढ़ता अनुभव होने लगी। भले-बुरे की पहचान तो पहले भी थी परन्तु उसके अनुसार चलना कठिन था। शिव बाबा का ज्ञान मिला तो सब कुछ आसान हो गया। मैं सोचने लगा कि जो चीजें देर से हजम होनी वाली और शुगर बढ़ाने वाली हैं उन्हें क्यों खाऊँ? जीभ के स्वाद के लिए अपना जीवन क्यों नष्ट करूँ? भूख से अधिक नहीं खाना है। माँस-शराब-अण्डे आदि व्यसन मुझे नहीं करने हैं। यह दृढ़ प्रतिज्ञा मैंने कर ली।

फिर मैं दूध, घी, मक्खन, दाल, चावल, हरी सब्जी का सेवन करने लगा, जीवन सुधरने लगा। खुशियाँ वापस आ गयीं। जीवन कमल फूल समान बन गया। तब से अब तक राजयोग का नियमित अभ्यास कर रहा हूँ। बाबा ने मेरी बहुत मदद की है। दिल से यही निकलता है, बाबा, आपका शुक्रिया, आपने मेरा भाग्य बना दिया। ❖

उसने मुझे ढूँढ़ लिया है

ब्रह्माकुमार हरीसिंह, रजौरी गार्डन, नई दिल्ली

वो मुझको पूछते हैं, भाई, क्यों इतना खिला-खिला है?
पहले तो ऐसा नहीं था, आखिर क्या मामला है?
मैं मुस्करा कर कहता, भाई, मुझे शिकवा, ना गिला है।
मैं ढूँढ़ता था जिसको, मुझे उसने ढूँढ़ लिया है।।

भक्ति बहुत करी थी, तीर्थ-व्रत किये,
प्राप्ति नहीं थी कुछ भी, जीयें तो कैसे जीयें?
अब मिला है जग का मालिक, चला ज्ञान का सिलसिला है।
मैं ढूँढ़ता था जिसको, मुझे उसने ढूँढ़ लिया है।।

ज्ञानदाता ने बताया है हमको, तू देह नहीं है, आत्मा है,
देवी-देवता अनेक हैं पर, एक ही परमात्मा है,
वो सृजनहार जहाँ का, मुझे वो ही तो मिला है।
मैं ढूँढ़ता था जिसको, मुझे उसने ढूँढ़ लिया है।।

जब वो बैठ सुनाता मुरली, तो ध्यान कहीं ना जाता,
जो प्रश्न हृदय में होते, सबका हल मिल जाता,
श्रीमत देकर उसने, जीवन नया दिया है।
मैं ढूँढ़ता था जिसको, मुझे उसने ढूँढ़ लिया है।।

क्या गुस्सा सहज और स्वाभाविक है?

ब्रह्माकुमारी दीपा सक्सेना, मालवीय नगर, नई दिल्ली

क्रोध, गुस्सा, रोब, आक्रोश सभी शब्द लगभग समान अर्थ लिए हुए हैं। प्रश्न यह है कि क्या गुस्सा सहज है? स्वाभाविक है? आवश्यक है?

गुस्सा या क्रोध एक आवेगपूर्ण भाव है जो नकारात्मक ऊर्जा लिये हुए है। कई मनोवैज्ञानिक तथा दार्शनिक इसे हानिकारक बताते हैं। उनके अनुसार, गुस्से का भाव हमारे शरीर पर, मस्तिष्क पर, रिश्तों पर तथा समाज पर घातक प्रभाव डालता है।

गुस्से की प्रक्रिया

जब गुस्सा आता है तो शरीर में 'एड्रेनाईन' तथा कोर्टिसोल' नामक हार्मोन बनते हैं जिनके कारण कई शारीरिक तथा भावात्मक लक्षण उत्पन्न होते हैं।

शारीरिक लक्षण

हृदयगति बढ़ जाना, श्वास का जल्दी-जल्दी चलना, रक्त प्रवाह का बढ़ जाना, रक्त-दबाव का बढ़ जाना, आँख की पुतलियों का फैल जाना आदि-आदि।

भावनात्मक लक्षण

आसुओं का निकलना, दुखी होना, एकान्त में रहना आदि-आदि। इसके अतिरिक्त चीखना, चिल्ला-चिल्लाकर बोलना, कभी-कभी तो हिंसक भी हो जाना।

गुस्से के अधिक समय तक चलने से शरीर में कई विषैले रसायन जमा हो जाते हैं जो कई तरह के शारीरिक तथा मानसिक रोगों को जन्म देते हैं। हमारे सोचने-समझने की प्रक्रिया बाधित होने लगती है और हम सही निर्णय नहीं ले पाते। कई बार तो 'गुस्से' की अवस्था में लिया गया निर्णय हमें जिन्दगी भर पछताने पर मजबूर कर देता है। गुस्से में ऐसे शब्दों का चुनाव अनायास हो जाता है जो अभद्र तथा अशिष्ट होते हैं और उनका प्रभाव हमारे रिश्तों और समाज पर बहुत ही प्रतिकूल पड़ता है।

'हर भाव' के पीछे हमारी एक विचारधारा काम करती है। हमारे विचार, हमारे द्वारा ही निर्मित होते हैं अर्थात् हम अपने विचारों के निर्माता स्वयं हैं या यूँ कहें, हमारे द्वारा उत्पन्न विचार ही हमारे भावों को जन्म देते हैं। यदि प्रेम के विचार होंगे तो प्रेम का भाव होगा, ईर्ष्या के विचार होंगे तो ईर्ष्या का भाव जागेगा, करुणा के विचार होंगे तो दया का भाव जागेगा। स्पष्ट है कि ऐसे विचार, जो क्रोध के भाव को जन्म देते हैं, हमारे द्वारा ही उत्पन्न किये हुए होते हैं।

अब हम यह कह सकते हैं कि विशेष परिस्थिति में, विशेष विचार निर्मित हुए जिनसे गुस्सा आया। किसी व्यक्ति ने ऐसी बात कह दी या कर दी जिसके फलस्वरूप गुस्सा आना स्वाभाविक हो गया। यहाँ यह समझना जरूरी है कि क्या कोई बाह्य परिस्थिति या व्यक्ति हमारे मन के भीतर घुसकर इन गुस्से वाले विचारों का निर्माता बन सकता है? याद रहे, विचारों का निर्माण करना हमारी अपनी जिम्मेदारी है। हम कह सकते हैं कि बाहरी परिस्थिति या व्यक्ति मेरे प्रतिकूल हो सकते हैं लेकिन मेरे विचार उस परिस्थिति में किन गुणों के हों, यह मेरी निजी जिम्मेदारी है।

जरा सोचिये, यदि समान प्रतिकूल परिस्थिति दस व्यक्तियों को दी जाये तो क्या दसों की समान प्रतिक्रिया होगी? निश्चित तौर पर सभी की अलग-अलग प्रतिक्रिया होगी। अत: प्रतिक्रिया स्वयं पर निर्भर करती है। गुस्सा करने की प्रक्रिया का उत्तरदायित्व भी हमारे पर अर्थात् स्वयं पर है।

गुस्सा क्यों आता है?

क्या कारण है कि व्यक्ति अपने वास्तविक शान्त स्वरूप से 'गुस्सैल' के सम्बोधन तक पहुँच जाता है। इतना ही नहीं, कई प्रकार के शारीरिक और मानसिक विकारों

का भी शिकार हो जाता है। गुस्सा आने के कारणों को हम मोटे तौर पर दो भागों में बाट सकते हैं –

आन्तरिक कारण

इनमें व्यक्ति का अस्वस्थ होना, थकान, मनोवैज्ञानिक दबाव, ईर्ष्या, अहंकार, लालच आदि हो सकते हैं।

बाहरी कारण

बाहरी परिस्थिति से उत्तेजित होकर और वातावरण के प्रतिकूल प्रभाव के कारण गुस्सा आ जाता है।

संक्षिप्त में कहें तो गुस्सा तब आता है जब व्यक्ति को अपनी इच्छानुसार कार्य का फल नहीं मिलता या उसके विचारों के अनुसार कार्य नहीं होता। यहाँ यह समझना जरूरी है कि गुस्सा आने का कारण मेरी अपनी इच्छाएँ और उम्मीदें हैं जो फलीभूत न होने पर मेरे गुस्से का कारण बनती हैं। मैं अगर दूसरों से किसी काम की उम्मीद रखूँ और वो पूरी न हो तो गुस्सा आना स्वाभाविक लगता है परन्तु क्या यह सही है? ऑफिस में बॉस अपने नीचे काम करने वालों पर, मालिक नौकर पर, अध्यापक विद्यार्थी पर, माता-पिता बच्चों पर, बलशाली व्यक्ति निर्बल पर गुस्सा होते हैं। अधिकतर मनुष्य किसी गलती का उत्तरदायित्व स्वयं न लेकर दूसरों को दोषी मानते हैं। क्या गुस्सा करके हम दूसरों की कार्यक्षमता बढ़ा सकते हैं? यह एक बड़ा सवाल है। गुस्सा कभी भी लाभकारी नहीं होता। इससे होने वाले हानिकारक प्रभाव हम समझ चुके हैं।

गुस्सा आने का एक कारण हमारा अहंकार है। दूसरों को डाँट कर, नीचा दिखा कर, उन पर हावी होकर, उनकी कमियाँ निकालकर हम अपने को उनसे ज्यादा श्रेष्ठ और महत्त्वपूर्ण समझते हैं। क्या ऐसा नहीं है? स्वयं विचार कीजिए। आइये, अब गुस्से के भाव से सम्बन्धित कुछ विचारधाराओं का मूल्यांकन करें –

लोग गुस्सा दिलाते हैं

उन्होंने गलती की तो गुस्सा तो आयेगा ही अर्थात् गुस्सा होने के अलावा कोई विकल्प ही नहीं रह जाता। अब समझें – उन्होंने तो सिर्फ कहा या किया ही है जो मेरे प्रतिकूल है। उससे गुस्से की प्रतिक्रिया तो मैं कर रहा हूँ। याद कीजिये, कभी ऐसा भी तो होता है, जब हमारा मूड अच्छा होता है, तो कोई बड़ी बात, जो हमारे प्रतिकूल हो, हमको ज्यादा गुस्सा नहीं दिलाती। बच्चों को भी मालूम होता है, जब मम्मी-पापा का मूड अच्छा होता है तो फाइल में गलत एन्ट्री पर भी डाँट नहीं पड़ती अर्थात् यह बात स्पष्ट हो जाती है कि गुस्से की प्रतिक्रिया के लिये मैं स्वयं उत्तरदायी हूँ।

गुस्सा करने से काम हो जाता है

हम जानते हैं, गुस्सा नकारात्मक ऊर्जा से भरा भाव है। इसका प्रयोग करके हम कभी भी सकारात्मक परिणाम नहीं हासिल कर सकते। अगर हम मान भी लें कि गुस्सा करने से काम हो जाता है तो वो अस्थाई ही होगा और उसमें गुणवत्ता होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। मुझे याद है, एक गार्मेन्ट-एक्सपोर्ट कम्पनी का मालिक अपने कारीगरों को रोज डाँटता-डपटता था। अक्सर गुस्सा करता था। उसका कहना था कि डाँटते-डपटते रहने से कार्य समय रहते पूरा हो सकेगा। उसने काम पूरा तो कर लिया लेकिन जब 'माल' विदेश पहुँचा तो गुणवत्ता की कसौटी पर खरा न उतरने से सारे माल को अस्वीकार कर दिया गया जिससे कम्पनी मालिक को बहुत भारी नुकसान हुआ। कारीगरों की कार्यक्षमता को बढ़ाने का साधन गुस्सा नहीं, प्रेम और प्रेरणा होता है – यह पाठ उसने बाद में सीखा। अतः गुस्से से काम नहीं होता वरन् अपनी बात को मनवाने के लिये, काम कराने के लिये, प्रेम, प्रेरणा तथा विचारों में दृढ़ता की आवश्यकता होती है।

गुस्से की विभिन्न अवस्थाएँ

छोटी-छोटी बातों पर झुँझलाहट, चिड़चिड़ाहट गुस्से की शुरूआती अवस्था है जैसे कि ट्रैफिक जाम में फँसने पर चिड़चिड़ापन, कम्प्यूटर पर लॉग ऑन होने में देरी होने से चिड़चिड़ाहट, किसी योजना पर एकाग्र होने के समय, किसी बच्चे के रोने से बौखलाहट आदि-आदि।

कई बार निराशावादी विचारों के कारण व्यक्तित्व में गुस्सा पनपने लगता है जैसे कि 'कोई भी काम नहीं बन रहा', 'जिन्दगी का मजा नहीं आ रहा' आदि-आदि। परिस्थितियों के बदलने का इन्तजार करते रहने से धीरे-धीरे गुस्सैल स्वभाव बनता जाता है। इसके अतिरिक्त किसी के प्रति अति गहरी नफरत भी क्रोध को जन्म देती है। कभी जीवन में कहीं गलत हुआ हो तो उसी उधेड़बुन में लगे रहते हैं कि मेरे साथ ऐसा क्यों हुआ? समाधान खोजने के बजाय सवालों के घेरे में घिरे रहते हैं। जवाब हासिल करने में असफल हो जाने से हम क्रोधी स्वभाव के बनते जाते हैं।

क्रोध से छुटकारा कैसे पायें?

1) गुस्से की प्रारंभिक अवस्था 'चिड़चिड़ाहट' पर ही सजग हो जायें। परिस्थिति आपके वश में नहीं परन्तु आपकी शान्ति, आपके वश में निश्चित तौर पर है।

2) स्वीकारें कि आप चिड़चिड़ाते हैं, झुँझलाते हैं। समझाइये अपने आपको। परिस्थिति को स्वीकारते हुए बिना विचलित हुए सम्भावित समाधान या परिवर्तन सोचिये। लम्बी सांस लीजिये, शान्त होने का प्रयास कीजिये।

3) दूसरों से उनकी क्षमताओं के अनुसार ही अपेक्षा रखिए और उसी अनुसार उन्हें प्रेरित कीजिए, प्रभावित कीजिए।

4) रोज सोने से पूर्व चेकिंग कीजिए

- आज दिन में किस-किस बात पर गुस्सा आया?
- क्या गुस्से के बगैर काम हो सकता था?
- क्या गुस्सा मुझे पसन्द है?
- क्या गुस्सा मुझे नुकसान पहुँचा रहा है?
- क्या मैं गुस्से पर विजय प्राप्त कर सकता हूँ?

तत्पश्चात् अपने मूल स्वरूप को याद कीजिए कि मैं एक शान्त स्वरूप आत्मा हूँ, शान्ति मेरा निजी गुण है। क्रोध सहज नहीं है, यह हानिकारक है। कोई मुझे दुख नहीं पहुँचाता, अपने दुख का कारण मैं स्वयं हूँ। मुझे स्वयं इस दुख से बाहर निकलना है।

याद रहे, गुस्सा एक नकारात्मक ऊर्जा से भरा भाव है। जिसके प्रति हम इसे पैदा करते हैं उसकी तरफ से वापसी में यही ऊर्जा हम पाते हैं। अत: यह किसी भी रूप में लाभप्रद नहीं है।

अन्त में एक और मान्यता की ओर ध्यान खिंचवाना चाहूँगी। कई मनोवैज्ञानिक भी इसी ओर इशारा करते हैं कि गुस्सा दबाना नहीं चाहिए बल्कि समय-समय पर जाहिर करना चाहिए। परन्तु सोचिये, अगर हम हर बार गुस्सा निकालते रहेंगे तो गुस्सा होने के संस्कार को बनने से रोक तो पायेंगे नहीं बल्कि गुस्सा निकालने की निरन्तरता से इस संस्कार को मजबूत अवश्य बना देंगे। इसका एक ही निवारण है, गुस्से की नकारात्मक ऊर्जा को सकारात्मक ऊर्जा में बदला जाये। आध्यात्मिक नियमों का पालन करके हम क्रोधमुक्त हो सकते हैं।

बौद्ध धर्म के महान अनुयायी के अनुसार, गुस्सा करने से हम इसे और मजबूती से अपनाते जाते हैं। इसको सिर्फ एक हथियार से पराजित कर सकते हैं, वो है सबके प्रति 'सद्भावना'। ❖

भगवान को क्या जवाब दोगे!

ब्रह्माकुमार दिनेश, हाथरस (उ.प्र.)

कई बार सामान्यजन यह कहते सुने जाते हैं कि ''जब भगवान ने इस संसार में भेजा है तो खाओ, पीओ, मौज करो, सब देखो, सब करो, सब भोगो। भगवान के पास वापिस जाओगे तो वह पूछेंगे कि मैंने तुम्हें नीचे भेजा था, तो तुमने क्या किया?''

भगवान क्या पूछेंगे?

विचार करने योग्य है कि जब हम वापिस जायेंगे तो क्या भगवान यह पूछेंगे कि तुम इन्द्रियों के वशीभूत होकर निकृष्ट वृत्तियों में लिप्त हुए या नहीं? या फिर यह पूछेंगे कि जब तुम्हारा गर्भ में पड़े-पड़े दम घुट रहा था और तुम उससे मुक्ति चाहते थे कि एक बार इस नर्क से बाहर निकल जायें फिर दोबारा इसमें नहीं पड़ेंगे या प्रसव वेदना के समय तुम चीख चिल्ला रही थीं कि इस बार जान बचाओ फिर कभी इस काम के गन्दे नाले में नहीं लुढ़केंगे या फिर जब अन्तिम श्वासें निकलने में तुम्हें अपने सब पाप कर्म दिखाई दे रहे थे तब तुम कह रहे थे कि अब वापिस इधर नहीं भेजना, अब कभी पाप कर्म नहीं करेंगे, उन सब वायदों का क्या हुआ? उन्हें निभाया या नहीं? या वो यह पूछेंगे कि मैंने सृष्टि की रचना के समय दैवयुग में सुन्दर काया और सुन्दर विचारों के साथ तुम्हें भेजा था, वो सब कहाँ गँवा दिये? या यह भी कहेंगे कि मैंने तुम्हें कहा था, हे मानव, काम और क्रोध नर्क के द्वार हैं, इनमें गोते मत खाना। यह काम विकार तुम्हें आदि, मध्य, अन्त दुख देने वाला है, इसको जीतना। स्वयं को जलाने वाले और दूसरों को जलाने वाले इस क्रोध को भी जीतना। फिर भी तुम सारी जिन्दगी क्यों खुद भी जलते रहे और दूसरों को भी जलाते रहे? क्या यह नहीं पूछेंगे कि मैंने तुम्हें नष्टोमोहा बनने की शिक्षा भी दी थी फिर भी तुम सारी जिंदगी बन्दरों की तरह मोह के जाल में फँसे रहे। तुमने मेरा कहना नहीं माना तो खाओ सजा। हमें यह निश्चित करना है कि भगवान क्या पूछेंगे और हम क्या जवाब देंगे?

धर्मविहीन मानव पशुतुल्य

वेदों-शास्त्रों के रचनाकारों ने भी लिखा है,

आहार निद्रा भयं मैथुनं च, सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषः, धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः।।

अर्थात् 'हे मानव, भोजन, नींद, सन्तानोत्पत्ति के लिए भोग – ये तो इन्सान और जानवर में समान हैं। इन्सान में विशेष केवल धर्म है। बिना धर्म के लोग पशुतुल्य हैं।' पवित्र पुस्तकों के माध्यम से कहा गया है कि यदि 24 साल तक ब्रह्मचारी रहोगे तो वसु ब्रह्मचारी कहलाओगे, 36 साल तक के रुद्र ब्रह्मचारी और 48 वर्ष तक यदि पवित्र रहोगे तो आदित्य ब्रह्मचारियों में तुम्हारी गणना होगी। यदि तुम आजीवन ब्रह्मचारी रहोगे तो चारों वेदों को एक ओर रखकर भी तुम्हारे से उनकी तुलना नहीं हो सकेगी।

राम प्रवाह के साथ-साथ काम प्रवाह

आज चारों ओर राम प्रवाह अर्थात् भक्ति, पूजा-पाठ बढ़ने के साथ-साथ काम प्रवाह भी अधिक हो रहा है। क्या बच्चे, क्या बूढ़े, क्या जवान सभी समान रूप से इस दलदल में धंसते जा रहे हैं। आज न कोई सीमा रही, न ही कोई मर्यादा। सब दूसरों को सही देखना चाहते हैं परन्तु स्वयं मौका पड़ने पर काम के नाले में डूबने से नहीं चूकते। हद तो इतनी हो गई है कि जिन्हें लोग सन्त और मसीहा समझते हैं, वे भी अपने लंगोट की लाज नहीं रख सके। हालाँकि मनुजी ने चार आश्रम बनाकर इस महान वैरी काम को मर्यादित किया था परन्तु आज यह व्यवस्था भी लगभग भंग हो चुकी है। स्थिति इतनी विकट है कि न गुरु, न अभिभावक परम्परा रही। इस काम-पिशाच के आगे न ही उम्र का कोई तकाजा रहा। बुजुर्ग हैं, शानो-शौकत, नाम, मान बहुत है परन्तु शादी अभी भी युवा से ही करने को तत्पर हैं, और कर भी रहे हैं।

गृहस्थ आश्रम पर इतना जोर क्यों?

जब कभी भी ब्रह्मचारी जीवन की चर्चा आ जाती है तो दुहाई दी जाती है कि 25 वर्ष के बाद गृहस्थ और सन्तानोत्पत्ति आवश्यक है परन्तु सवाल यह है कि क्या 25 वर्ष तक मनसा, वाचा, कर्मणा सम्पूर्ण ब्रह्मचारी रहे? और 50 वर्ष के बाद इरादे क्या हैं? क्या उसी व्यवस्थानुसार जिसकी आप दुहाई दे रहे हैं, आप वानप्रस्थ और उसके बाद संन्यास आश्रम का पालन करेंगे? यदि वानप्रस्थ और फिर संन्यास आश्रम नहीं तब केवल गृहस्थ आश्रम पर इतना जोर क्यों?

सृष्टि के चलने की चिन्ता न करें

युवा पाठक सोच रहे होंगे कि यदि सभी यह सोच लें तो सृष्टि चलेगी कैसे? उनके लिए महात्मा गाँधी जी के विचार (जिन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध आन्दोलन के समय स्वयं ब्रह्मचारी जीवन का पालन किया) प्रस्तुत हैं – वे कहते हैं कि ''इस प्रश्न में हमारी ही कमजोरी छिपी हुई है। वास्तव में हम ब्रह्मचर्य का पालन करना ही नहीं चाहते। अगर इसका पालन करने से संसार का नाश होता है तो क्या? हम कोई ईश्वर तो नहीं हैं जो संसार की चिन्ता करें! जो लोग वकालत, डॉक्टरी या इंजीनियरिंग के पेशे को शुरू करना चाहते हैं, वे कभी यह नहीं सोचते कि यदि सब वकील या डॉक्टर या इंजीनियर बन जायेंगे तो यह सृष्टि कैसे चलेगी?" कलिकाल में आज जो कुछ भी हो रहा है, वह सृष्टि संचालन के लिए नहीं है बल्कि अपनी काम की वासनाओं की पूर्ति के लिए हो रहा है।

ताकत का पता तो तब चलता जब.....

काम विकार से अपनी कला, काया, तेज, ओज नष्ट करने वालों की ताकत को पुन: जगाने के लिए तरह-तरह के प्रसाधन, गोली, तेल, कैप्सूल, सिलाजीत, तंत्र, मंत्र, यन्त्र वाले विज्ञापन – अखबारों, पत्र-पत्रिकाओं और दीवारों पर भरे पड़े रहते हैं। काम के इस गंदे नाले में गिरकर अपनी ताकत को तिलांजली देने वालों के लिए मर्दाना ताकत देने वाले अनेक डॉक्टरों की फौज भी इकट्ठी है। अनिच्छुक, भूखी, प्यासी, बीमार, उदास, परेशान नारी पर गोलियाँ, दवायें खा-खाकर जोर आजमाइश करने के बजाए, सीमा पर माइनस 50 से भी कम तापमान पर गोलियों और तोप-बारूदों का सामना सीने पर करते, असली ताकत का पता तो तब चलता। या फिर मानवता के इस परम वैरी काम विकार को जीतने के लिए होने वाली साधना के लिए आन्तरिक शक्तियों को काम में लाते, तब ताकत का पता चलता। या जिसे लोग अच्छे-अच्छे विश्वामित्रों का भी तप हिलाने वाली चुनौती कहते हैं, उस चुनौती का सामना करते और उसमें विजयी बनकर दिखाते।

शरीर में ताकत देने वाला क्या है?

वेदांगों में लिखा है –

रसात् रक्तं, ततो मांसां, मांसात् मेद: प्रजायते।
मेदादस्थि, ततो मज्जा, मज्जाया: शुक्र सम्भव:।।

भावार्थ यह है कि भोजन ग्रहण करने के पश्चात् रस पैदा होता है। उससे रक्त, माँस, हड्डी आदि शरीर के अंगों की वृद्धि अथवा पालना होती है। सबसे कम मात्रा में शुक्र बनता है जिसे गँवाने के लिए मानव न जाने क्या-क्या उपाय करके भस्मासुर बना हुआ है। इसे हर बार गँवाने के बाद शरीर से ताकत निकल जाने का अहसास तो उसी पल हो जाता है परन्तु देहअभिमान में लिप्त वह उसका आनन्द उसी प्रकार लेता है जिस प्रकार कुत्ता हड्डी को चबाने पर अपने ही मुख से निकलने वाले रक्त को चाटकर आनन्द की अनुभूति करता है।

महावीरता किसमें है?

इस लेख के माध्यम से मेरा प्रश्न मात्र इतना है कि महावीरता अथवा बहादुरी किसमें है? क्या काम विकार के वशीभूत होने में या सबके बीच में रहते हुए भी यम और नियम का पालन करने में? अरे, उस काम के काम को तो कोई भी पढ़ा, अनपढ़ा, जानवर, पक्षी सब कर लेगा परन्तु क्या ब्रह्मचर्य का पालन करना सभी के द्वारा संभव है? बहादुरी और मेहनत किसमें है? काम विकार के वशीभूत होने में अथवा आग और कपूस एक साथ रहकर भी उस अग्नि में न जलने में? ❖

युगप्रबोधनी बातें...

एक महान युग पुरुषोत्तमनी की

ब्रह्माकुमार देवेन्द्र नारायण पटेल, मुलुंड, मुंबई

चारों तरफ समुद्र का पानी, बीच में बसा हुआ एक शहर था। उस शहर में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की शाखा की संचालिका बहन को संकल्प आया कि सारे शहरवासियों को शिव बाबा का परिचय देना चाहिए। उसके लिए वहाँ पर एक प्रदर्शनी रखी गई। सवेरे दस बजे से प्रदर्शनी प्रारंभ की गई। शहर के लम्बे पुरातन इतिहास काल में पहली बार इस प्रकार की नई प्रदर्शनी होने के कारण वहाँ पर बहुत ही भीड़ इकट्ठी हो गई। बहन बहुत ही सुचारू रूप से सबको समझा रही थी। लोग ध्यान से सुन रहे थे। धीरे-धीरे दोपहर हो गई। बहन ने एक भाई को कहा, मैं सेवाकेन्द्र पर जाती हूँ। बाद में सामान समेट कर सेवाकेन्द्र पर लेकर आना।

जो भी सेवाधारी भाई थे, वे धीरे-धीरे वापस चलने लगे। उनको ड्यूटी पर जाना था, छुट्टी नहीं थी। अब वो भाई अकेला ही रह गया। लोग तो अभी भी आ ही रहे थे, वह भाई सबको प्यार से समझा भी रहा था। बाद में इस भाई ने प्रदर्शनी बंद की। समेटते-समेटते दो बज गये। समेटकर, सामान को लेकर सेवाकेन्द्र पर आया। सेवाकेन्द्र का दरवाजा बंद था। उस भाई ने घंटी बजाई तो वह बहन स्वयं आयी और दरवाजा खोला और बड़े प्यार से बैठाकर पानी पिलाया। उस भाई को इस निमित्त बहन के सिवाय कोई दिख नहीं रहा था, बाकी सब बहनें आराम करने चली गई थीं। भाई ने बहन से कहा, मैं जाता हूँ। बहन बोली, भाई, आप कब ट्रेन पकड़ेंगे, कब मलाड पहुँचेंगे, कब जाकर खाना बनायेंगे, कब खायेंगे, एक घंटा तो ट्रेन में लग जायेगा, आप बैठ जाओ, मैं गरम-गरम खाना तुरंत बनाकर लेके आती हूँ। वह बहन किचन में गई, किसी भी बहन को जगाया नहीं, खुद ही आटा गूंथकर फटाफट रोटी और सब्जी बनाकर पंद्रह मिनिट में लेकर आयी और कहा, भाई खा लो, मैं सामने बैठती हूँ।

वह भाई भोजन करके जाने की तैयारी कर रहा था परंतु पैर खिसक नहीं रहे थे। आँखों में प्यार के आँसू टपकने लगे। यह देखकर बहन बोली, क्यों भाई, क्या हो गया? उस भाई ने कहा, बहनजी, आपने इतनी तकलीफ क्यों उठाई? आराम करने का समय है। आप दूसरी बहन को जगाकर उसको खाना बनाने को कह सकते थे। आपने ही क्यों बनाया? आप ही दरवाजा खोलने आयी, खुद ही पानी पिलाया, फिर ग्लास खुद ही रखने गये। मेरी थाली भी साफ करने आप स्वयं ही लगे। आप दूसरों को कह सकते थे। तब वह बहन बोली, भाई, दोपहर का समय है, तीन बज रहे हैं। सब बहनें मेरे से उम्र में छोटी हैं, उनको आराम की सख्त जरूरत है, मैं बड़ी हूँ, मुझे एक दिन आराम नहीं मिलेगा तो क्या फरक पड़ेगा। आप भी सेवा करके थककर आये हो, आप को भी कड़ी भूख लगी थी इसलिए मैंने समय बरबाद न करते हुए फटाफट खाना बना दिया, ठंडा खाना खिलाना अच्छा नहीं है।

जानते हो वह बहन कौन थी? वह बहन थी राजयोगिनी दादी प्रकाशमणि जी। माँ की मधुर ममता से भरपूर, दूसरों की तकलीफों का ख्याल करने वाली, दयाभाव रखने वाली और परोपकारी होने के कारण वह आगे चलकर मुंबई सेवाकेन्द्र की संचालिका से प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के हजारों सेवाकेन्द्रों की मुख्य संचालिका बन गई। ❖

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, सम्पादक, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबू रोड द्वारा सम्पादन तथा ओमशान्ति प्रिन्टिंग प्रेस, शान्तिवन -307510, आबू रोड में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के लिए छपवाया। संयुक्त सम्पादिका - ब्र.कु. उर्मिला, शान्तिवन

▶▶ फोटो, लेख, कविता या अन्य प्रकाशन सामग्री के लिये : E-mail : gyanamritpatrika@bkivv.org

Website: gyanamrit.bkinfo.in Ph. No. : (02974) - 228125